❖ समता कथा माला पुष्पाक—2

❖ स्वाभिमान

❖ श्री धर्मेशमुनिजी म सा

❖ प्रथम सस्करण : अप्रेल, 2008, 3100 प्रतियाँ

❖ मूल्य 10/-

❖ अर्थ—सहयोगी
श्री आनन्दराजजी खिवेसरा, चैन्नई

❖ प्रकाशक :
श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ
समता भवन, रामपुरियो मार्ग, बीकानेर— 334005 (राज)
दूरभाष 0151-2544867, 3292177, 2203150 (Fax)

❖ आवरण सज्जा व मुद्रक ·
तिलोक प्रिंटिग प्रेस, बीकानेर
दूरभाष 9314962475

प्रकाशकीय

शासन प्रभावक विद्वान् श्री धर्मेशमुनिजी म सा द्वारा रचित **स्वाभिमान** साहित्य कचनपुर गाँव के एक धन्ना सेठ परिवार की कहानी है। जो बड़े ही सुख एव आनन्द के साथ अपने पुत्रो एव पुत्रवधुओ के साथ जीवन यापन करते थे। जिसमें सबसे छोटी पुत्रवधू मोहिनी को अपने ही अभिमानी परिवार के सामने अपने स्वाभिमानी व्यक्तित्व को किस प्रकार जीवित रखा जाये, उन्हीं सकल्पो को साकार रूप देने का एक उपक्रम है। इन्हीं सकल्पो को साकार रूप देने के लिए अन्तिम क्षण तक धर्म का साथ न छोडते हुए सघर्षशील जीवन मे भी महामत्र एव उसके प्रति आस्था का एक सुन्दर चित्रण किया गया है। जिसमे प्रेरणा दी गई है कि महामत्र स्मरण करने से कितनी शाति मिलती है एवं विंकट परिस्थितियाँ अपने आप ही दूर हो जाती है।

साहित्य की भाषा इतनी सहज एव सरल है कि बाल, युवा, वृद्ध सभी को पढने मे रोचकता महसूस होगी। अपने नाम एव शीर्षक की सार्थकता को सिद्ध करते हुए जिस शैली मे इसकी रचना की गई है वह न केवल हृदय को स्पर्श

करती है अपितु और अधिक जिज्ञासा उत्पन्न करती है और यही महान् रचनाकार की महती सफलता है।

श्रद्धेय श्री धर्मेशमुनिजी म सा द्वारा लिखित प्रेरक कहानी समाज के सामने प्रस्तुत करते हुए हमे बडी प्रसन्नता हो रही है। इस पुस्तक से हम कहानियो की पुस्तको की श्रृखला **समता कथा माला** के रूप मे प्रारम्भ करने जा रहे है। भविष्य मे इसके अतर्गत और भी पुस्तको का प्रकाशन किया जायेगा।

उक्त साहित्य के प्रकाशन मे समाज के धर्मनिष्ठ श्री आनन्दराजजी खिवेसरा, ने जो सहयोग प्रदान किया है तदर्थ हम उनके अत्यत आभारी है। विश्वास है कि सत्साहित्य के प्रकाशन मे आपका निरन्तर सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

इसी मगलमनीषा के साथ

मदनलाल कटारिया

सयोजक—साहित्य प्रकाशन समिति

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर

अर्थ सहयोगी परिचय

उदारमना, सरल स्वभावी, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी चैन्नई निवासी श्रीमती जीवनकवरबाई–श्री भवरलालजी खिवेसरा एक आदर्श दम्पत्ती है। खिवेसरा दम्पत्ती ने अपने जीवन में अनेक त्याग–प्रत्याख्यान ग्रहण किये हुए है। श्रीमती जीवनकवर बाई खिवेसरा की रत्नकुक्षी से 6 पुत्र एव 2 पुत्रियो का जन्म हुआ।

आपके ज्येष्ठ पुत्र श्री आनन्दराजजी खिवेसरा सरल एव सौम्य स्वभावी व्यक्तित्व के धनी पुरुष है। आप अत्यत ही मिलनसार, उदारमना एव सेवाभावी युवारत्न है। आप अनेकों सामाजिक, धार्मिक धार्मिक सस्थाओं से जुड़े हुए हैं एव उनके पोषक है। आपने श्री साधुमार्गी जैन सघ, चैन्नई के पूर्व उपाध्यक्ष पद पर रहते हुए अनेकों प्रशसनीय एव सराहनीय कार्यों को निष्पादित किया हैं। आप श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ के कार्यकारिणी सदस्य के रूप में भी अपनी सेवाएँ दे रहे हैं तथा सघ के प्रत्येक कार्य को रुचिपूर्वक पूर्ण करने में विश्वास रखते हैं। आपका कार्य क्षेत्र इतना विशाल हैं कि आप धार्मिक सस्थाओं के साथ–साथ अनेकों सामाजिक सस्थाओं में रहते हुए उनके उत्थान के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं। वर्तमान मे आप विल्लीवाक्म जैन सघ को अध्यक्ष पद पर अपनी सेवाओ से लाभान्वित कर रहे हैं।

इसी प्रकार ब्रह्मऋषि आश्रम तिरुपति गौशाला के अध्यक्ष पद पर अपनी सेवाएँ देते हुए जीव कल्याण के प्रति समर्पणा भाव से पूर्णतया ओत–प्रोत हैं। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती शाताबाई सच्चे अर्थो मे आपकी धर्म सहायिका है। जो सदैव सत–सतियों की सेवा

एव आतिथ्य सत्कार में तत्पर एवम् अग्रणी रहती है। आपकी धर्म पत्नी आप के धार्मिक कार्यों में कन्धे से कन्धा मिलाकर सदैव सहयोग देती रहती है। आपके दोनों पुत्र श्री यशवतजी एव श्री बलवतजी आप ही के पदचिन्हों पर चलकर परिवार की गौरवशाली परम्परा का निर्वहन कर रहे हैं। आपकी तीनों सुपुत्रियाँ श्रीमती अनुराधा राठौड़, प्रिया बाफना व मोनिका राका व आपकी पुत्रवधू श्रीमती अनिता व श्रीमती पिकी खिवेसरा भी धार्मिक भावनाओ से ओत–प्रोत है। आपके चारों पौत्र चि अरविन्द, अभिनन्दन, अभिराम एव ऋषभ खिवेसरा भी इसी पथ पर चलते हुए अपने परिवार की कीर्ति को आगे बढा रहे हैं।

आपका पूरा परिवार श्री साधुमार्गी जैन सघ, चैन्नई के प्रमुख घरों में से एक है। आपके परिवार ने समाज के अनेक कार्यों में अपना अनुकरणीय सहयोग प्रदान किया है। आपका सम्पूर्ण परिवार आचार्य श्री नानेश एव आचार्य श्री रामेश के प्रति अनन्य श्रद्धा भावना से ओत–प्रोत है।

सामाजिक कार्यों के साथ–साथ आपका परिवार प्रामाणिक सोने–चांदी के व्यापार एव कुशल उद्योगपति परिवारों में माना जाता है। आपका व्यवसाय आनन्द ज्वैलर्स के नाम से अपनी नैतिकता, गुणवता व कर्मनिष्ठा से पूरे चैन्नई में विख्यात है।

इस पुस्तक के प्रकाशन मे आपके द्वारा जो सहयोग प्राप्त हुआ है उसके लिए सघ परिवार आभारी हैं और हम प्रार्थना करते है कि खिवेसरा परिवार समाज एव देश की सेवा करते हुए प्रगति के पथ पर निरन्तर गतिमान रहे एव इसी तरह सघ एव शासन की सेवा करता रहे। आपकी असीम श्रीवृद्धि की भावना एव शुभाकामनाओं के साथ......।

श्री अ.भा.सा. जैन संघ द्वारा प्रकाशित साहित्य

1	जिणधम्मो	150/–
2.	आत्मसमीक्षण	80/–
3	काव्यमय उत्तराध्ययन सूत्र	80/–
4	श्री गणेशीलालजी म सा का जीवन चरित्र	125/–
5	साधुमार्ग की पावन सरिता	200/–
6	समता सुमन	25/–
7	एक सितार अस्सी झणकार	7/–
8	चिन्तन मनन अनुशीलन भाग–2	10/–
9	नाना गुरु की कहानी	6/–
10	समीक्षण ध्यान मनोविज्ञान का एक प्रयोगात्मक रूप	10/–
11	कर्म प्रकृति भाग – 1	60/–
12.	कर्म प्रकृति भाग – 2	200/–
13	श्री राम उवाच भाग 1 से 9 तक (प्रति पुस्तक)	30/–
14	नानेशवाणी भाग 1 से 49 तक (प्रति पुस्तक)	30/–
15	समता पर्युषण पर्वाराधना	20/–

16	श्री दशवैकालिकसूत्र	20/–
17	जैन सस्कार पाठयक्रम भाग 1 से 8 तक (सैट)	35/–
18	अपश्चिम तीर्थंकर महावीर भाग–1	40/–
19	द्वादश चारित्र सग्रह	12/–
20	तत्त्व का ताला ज्ञान की कुजी भाग– 1	15/–
21	तत्त्व का ताला ज्ञान की कुजी भाग–2	10/–
22	जैन तत्त्व निर्णय भाग –1	10/–
23	जैन तत्त्व निर्णय भाग–2	10/–
24	अद्भुत योगी	50/–
25	परमार्थ परिचय – 1	20/–
26	परमार्थ परिचय – 2	20/–
27	पूर्ण स्वतन्त्रता की राह	18/–
28	जैन सस्कृति का राजमार्ग	15/–
29	प्रचलित स्त्रोत सार्थ	20/–
30	अन्तगडदसाओ सूत्र	15/–
31	प्रतिक्रमण सूत्र	3/–
32	सामायिक सूत्र	2/–
33	साधना विवेक	2/–
34	गणेश गुण शतक	10/–

स्वाभिमान

भारत-भू पर कचनपुर नाम की एक अति रमणीय नगरी थी। जिसकी ख्याति जन-मन को सहज मोहित करने वाली थी। सर्व ऋतुओ के यथाक्रम से प्रवाहित होने से वहॉ का जन-समुदाय हर ऋतु के अनुसार खान-पान, रहन-सहन, साज-सज्जा, वस्त्रालकार का उपभोग करने का आनन्द लूटता था और सहज सुखानुभूतिमय जीवनयापन करता था व उसके अनुसार साधन प्राप्त करने व जुटाने मे भी सतत प्रयत्नशील रहता था। क्योकि वहॉ का राजा धर्मराज और उनकी महारानी धर्मश्री दोनो ही "यथा नाम तथा गुण" सम्पन्न थे। इतनी विशाल राज-ऋद्धि प्राप्त करके भी उनमे अह भाव तो प्रवेश ही नहीं कर पाया था। क्योकि वे इसको अपनी मेहनत व बुद्धि का चमत्कार नही मानते हुए भवो-भवो का पुण्य या धर्म का ही सुफल अथवा प्रसाद मानते थे जिसमे अपने पूर्वजो का आशीर्वाद भी जुडा मानते थे, साथ ही, प्रजा का सौभाग्य भी। इसलिए उनका विश्वास था कि एक

हरा-भरा वृक्ष जड के सिचन करने से ही हरा-भरा रह सकता है। और यदि उसका सिचन न हो तो उसे सूखते, ठूठ होते देर नहीं लगती। इसी प्रकार यह जीवन के प्रागण मे सुख रूपी वृक्ष राज्य-ऋद्धि, परिवार, सुख-वैभव से जो हरा-भरा परिलक्षित हो रहा है, उसकी मूल जड धर्म और पुण्य ही है। इसलिए यदि इसको हरा-भरा, सदाबहार रखना या बनाना है तो आवश्यकता है—इसके सिचन व सरक्षण की।

इसलिए यह धर्माराधन करने व दीन-दु खी, अनाथो-अभ्यागतो को यथायोग्य सहयोग देने में, प्रजा की भलाई के कार्य करने मे ही हो सकता है, अन्यथा अपने ऐशो-आराम मे और भोगोपभोग मे व्यय करने से तो वह पाप की जड का पोषक होता हुआ उसको सुखाने वाला ही होगा। इसलिए वे अपने लिये केवल राज्य-मर्यादा का गौरव व उस पद की प्रतिष्ठा कायम रह सके, उतना ही राज्य-कोष मे से धन व्यय करते। इसके अलावा बाकी सारा खजाना प्रजा के हित के लिये खोल दिया। कुएँ, तालाब, स्कूल, धर्मशाला, यातायात के साधन व पक्के मार्गों के साथ ही विशाल वनराजि, जिससे गरीब से गरीब और अभावग्रस्त व्यक्ति भी उसमे उत्पन्न साधनो से अपनी आजीविका प्राप्त कर सके एव हर व्यक्ति धर्मगुरुओ, मुनियो, त्यागियो का सान्निध्य प्राप्त कर सके। और अपने

जीवन को दया, करुणा, सदाचार, सद्व्यवहार, शिष्टाचार के सुसस्कारो से अनुरजित कर सके ताकि इससे परस्पर प्रीति-भाव के साथ एक-दूसरे के सुख-दु ख मे सहयोगी बनते हुए राज्य के गौरव को बढाने मे सहयोगी बनते रहे। इसी के सुफलस्वरूप वहॉ की प्रजा के हर वर्ग के व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार– व्यापारी वर्ग व्यापार के क्षेत्र मे, कृषक वर्ग कृषि के क्षेत्र मे, राजकर्मचारी राज्य-व्यवस्था के क्षेत्र मे, अपने-अपने कर्तव्य का पूर्ण रूप से पालन करते हुए राज्यश्री के अभिवर्धन मे जुटे हुए थे। साथ ही शिल्पकला, शास्त्रकला, सगीतकला आदि मे प्रवीण कलाकार अपनी कला की विचक्षणता से सूदूर राज्यो मे भी राज्य को महिमा-मडित करने मे पीछे नहीं थे। राज्य के प्रतिष्ठित व्यापारी स्थानीय प्रतिष्ठानो के साथ ही सूदूर राज्यो मे अपने व्यापारिक कौशल का परिचय देकर राज्य-गौरव मे चार चाद लगा रहे थे।

(2)

उसी कचनपुर में श्रेष्ठी धनपत एव उनकी धर्मपत्नी लक्ष्मी निवास करते थे। जिनकी राज्य-पथ के पास व्यापार वीथि मे विशाल सप्तमजिली हवेली थी। उसी मे नीचे विशाल बडे-बडे गद्दी-तकिये के ऊपर श्वेत चद्दरों से आच्छादित दुकान थी जिसमे सोना, चादी, हीरे, जवाहरात

का व्यापार बड़े जोरो पर चलता था। अनेक मुनीम-गुमाश्ते व्यापार में सहयोग हेतु रखे हुए थे। उन चतुर मुनीम-गुमाश्तो के सहयोग से सेठजी की अनेक राज्यो मे पेढिये चल रही थी। सेठ धनपत की व्यापारिक प्रामाणिकता की सब जगह अच्छी प्रतिष्ठा जमी हुई थी। सेठ-सेठानी की उदारता, आत्मीयता से राजदरबार मे भी अच्छी इज्जत थी।

कुछ समय बाद श्रेष्ठी धनपत के घ्र मे साल दो-साल के अन्तराल से चार पुत्र पैदा हुए जिनके क्रमश जितेश, चन्द्रेश, दिनेश और गणेश नाम रखे गये। साथ ही सबका यथासमय बडी धूमधाम से जन्म-महोत्सव मनाया गया और सेठ धनपत व सेठानी लक्ष्मी ने सबके जन्म की खुशी मे खूब दान-पुण्य के कार्य किये। चारों पुत्र माता-पिता व पारिवारिक सदस्यो एव दास-दासियो के हाथो मे अभिवर्धित होने लगे। बालवय से जब किशोरवय मे आये तो सबको अच्छे गुरुकुल मे शिक्षा प्राप्त करने हेतु भेज दिया गया जिसके फलस्वरूप जितेश, चन्द्रेश और दिनेश ने तो थोडे समय मे ही अपनी प्रतिभा का अच्छा विकास करके सर्वकलाओ मे निपुणता प्राप्त करली और लग गये श्रेष्ठी धनपत के साथ व्यापार मे हाथ बटाने मे। पर गणेश इन सब मे कमजोर व प्रकृति का भद्र था। वह किसी व्यापार की कला मे प्रवीण नहीं होने से घर मे खेती-बाडी का काम सभालने के साथ ही गाय, भैंस, बैल-बछडो की

सार-सभाल करता और माता-पिता, बडे भाइयो की सेवा करता हुआ मस्त रहता था।

इधर जितेश, चन्द्रेश और दिनेश ने अपनी प्रतिभा से पेढी के व्यापार को भी खूब विकसित कर दिया व उनकी वाक्पटुता एव कार्यकुशलता से सहज ही हर व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रहता, जिसके फलस्वरूप उनके यौवनवय मे प्रवेश पाते ही अनेक बडे-बडे श्रेष्ठिवर्य अपनी-अपनी कन्याओ से सगाई करने हेतु आ-आ कर आग्रह करने लगे। आखिर श्रेष्ठी धनपत ने भी यथा-क्रम से तीनो की शादी कर दी। क्रमश घर मे तीन बहुएँ आ गईं। जिनके नाम भी क्रमश चन्द्रकला, सुमगला और शशिकला। तीनो ही बड़े घरानो की, जो अपने साथ मे पीहर से खूब धन-माल लेकर आई थी। इसलिये तीनो अपने-आप को बडे बाप की बेटी समझकर घर मे अपना अधिकार जमाने की होड़ मे लगी हुई थी और तीनो पुत्र दुकान पर।

(3)

अब रह गया बेचारा गणेश, जो था भी एकदम भोला-भाला और सरल-शातस्वभावी। पर माता-पिता का परमभक्त, जिसको देखकर सेठ धनपत व सेठानी लक्ष्मी को रात-दिन एक ही चिन्ता रहती कि इसका क्या

होगा ? क्या ही अच्छा हो कि यदि कोई साधारण परिवार की ही बच्ची हो चाहे, दहेज मे कुछ भी नहीं लाये पर इसके जैसी सरलस्वभावी व सेवा-भाविनी हो ताकि इसको सभाल सके और हमारी भी सेवा कर सके। ऐसी बहू मिल जावे तो इसकी जिन्दगी और हमारा बुढापा भी आराम से निकल सके। क्योकि ये तीनो तो बड़े बाप की बेटिये हैं।

इसी बात का चिन्तन करते हुए मौका देख रहे थे कि ऐसी कोई लडकी मिल जाये। आखिर खोजते-खोजते एक मोहिनी नाम की बाला, जो खाते-पीते घराने के सेठ कुन्दनमल की सुपुत्री थी जो हालाकि विशेष पढी-लिखी व रूपवान तो नहीं थी, पर एक सद्गृहिणी मे जो लक्षण होने चाहिए, वे उसमे मौजूद थे। आकृति से सौम्य और प्रकृति मे भद्र थी।

सेठानी लक्ष्मी को वह भा गई। बस, फिर क्या था ? अन्य सगे- सम्बन्धियो द्वारा जब सेठ कुन्दनमलजी को समाचार मिले तो एकाएक तो वे विचार मे पड गये कि कहाँ वे और कहाँ हम ? फिर सारी बात मालूम पडते ही मन मे सोचा–चलो, बडे घर मे जाने से बेटी मोहिनी का जीवन तो सुखी हो जायेगा। इतनी लम्बी-चौडी जायदाद है तो इसके हिस्से मे भी बहुत-कुछ आयेगी। ऐसा सोचकर उन्होने स्वीकृति दे दी और सगाई का दस्तूर कर दिया। और कुछ समय बाद विवाह भी सम्पन्न

हो गया। मोहिनी हालाकि बडी बहूओ की तरह पीहर से भारी दहेज तो नहीं लाई, पर प्राप्त सद्-सस्कारो का खजाना साथ लेकर आई थी जिसके कारण कुछ ही दिनों में उसने अपनी विनयशीलता, मृदुता और सेवा-भावना से सास-श्वसुर के हृदय मे स्थान बना लिया और अपने पति के हृदय मे भी। साथ ही आस- पडौसियो के हृदय मे भी।

अब तो उसकी दैनिक चर्या भी ऐसी ही बन गई कि प्रात उठकर सबसे पहले महामत्र के स्मरण के बाद सास-श्वसुर व पतिदेव को नमस्कार करके शौच-निवृत्ति के बाद सारे घर की सफाई करती, फिर गाय-भैंस के स्थान की सफाई करके उनको घास, चारा, बाटा आदि देकर बडे स्नेह से सहलाकर फिर उनका स्वय के हाथ से दूध निकालकर घर मे लाती। बाद में पानी आदि छानकर, नया पानी कुएँ से स्वय लाकर भरती। उसके बाद लकड़ी कडे, चूल्हे आदि को देखकर फिर जलाती। और दूध गरम करके, नाश्ता तैयार करके सबको बड़े प्रेम से करने का आग्रह करती। और सास-श्वसुर व पतिदेव को खिलाकर फिर जो-कुछ बचता, उसे खुद खा करके फिर रसोई बनाने बैठ जाती। और सारे पारिवार का भोजन बनाकर सबको भोजन करने का आग्रह करती। फिर भी उसके चेहरे पर कभी किसी प्रकार का तनाव

नहीं रहता। हमेशा अपने कर्तव्य का निर्वाह करके खुद भी खुश रहती और सबको खुश रखने का प्रयास करती।

लेकिन इतना सब-कुछ करते हुए भी उनकी जेठानियॉ चन्द्रकला, सुमगला और शशिकला तो अपने अह भाव मे बेभान होकर उसकी एक नौकरानी से ज्यादा इज्जत नही करती। प्रति समय उसके साथ रुक्ष व्यवहार ही करती। उनके मस्तिष्क मे हमेशा यही अह का भूत कौतुक करता रहता कि ये दोनो तो हमारे पतिदेवो की कमाई पर मौज उडा रहे हैं। यही हाल गणेश का भी था। दिन-भर पशुओ को खेत मे ले जाकर उनकी देखभाल करता, खेतो मे मजदूरो के साथ मजदूर की तरह काम करता। शाम को घर आता और पहले तो भाभिये जो-कुछ डालती वह बडे सतोष से खा लेता। अब पत्नी मोहिनी के आने के बाद तो वह स्वय उसको जीमाती, उसके कपडे धोती। थक जाने पर हाथ-पाव दबाती जिससे थोडी आराम की जिन्दगी जीने लगा। लेकिन बडे भाई-भाभी तो उसको अपने ऊपर भार समझते और उसकी भी एक नौकर से ज्यादा इज्जत नही करते।

हॉ, सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी उन दोनो की पूरी चिता रखते। सुख-दु ख की बात सुनते और कभी जब बड़े पुत्र व बहुएँ उनकी उपेक्षा करते तो उनका हृदय अन्दर ही अन्दर से दु खित होता, पर कुछ बोल नहीं

सकते क्योकि उनका सारे घर पर दबाव था। इसलिये मन मार कर रह जाते और उनको सहलाते रहते। लेकिन मोहिनी कहती–आप हमारी चिन्ता न करे। वो तो हमारे पूज्य हैं। उनकी सेवा करना हमारा धर्म है। यह सुनकर दोनो गद्‌गद हो जाते और अन्तर्मन से आशीर्वाद देते कि तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल हो।

(4)

गरमी का मौसम था। एक दिन सब भोजन आदि से निवृत्त हो चुके थे। सेठानी लक्ष्मी बीच चौक मे अपनी खाट पर बैठी थी और हवा के झोको से थोड़ा शान्ति का अनुभव कर रही थी। इधर तीनो बडी बहुएँ भी एक-एक करके अपने कमरो से नीचे अपनी सास के पास आकर सेवा का अभिनय करती हुई पाव दबाने बैठी और अपनी वाक्‌पटुता से मीठी-मीठी वाणी द्वारा सासूजी को खुश करने लगी। इधर मोहिनी भी घर का शेष कार्य निवृत्त करके आज अपनी जेठानियो को सासूजी के पास बैठी देखकर पास आ गई और बैठ गई नित्य क्रमानुसार उनके पाव दबाने। आज चारो बहुओ का एक साथ अपने पास मे बैठी देखकर हर्षित होती हुई सेठानी लक्ष्मी बोल पडी–मेरी प्यारी बहुओ ! आज तुम चारो को देखकर बडी खुशी हो रही है। पर एक बात मेरे मन को बार-बार

नोचती रहती है कि क्या ये सब जीते जी ही प्रेम दिखा रही हैं या मरने के बाद भी कभी हमे याद करेगी ?

क्योकि हम रात-दिन यही देखते आये हैं कि जब तक सास है तब तक सबको आस है और सास निकलते ही आशा छूटने के बाद कौन किसको याद करते हैं ? यदि किसी का किसी के प्रति बहुत ज्यादा अपनत्व भी होता है तो कहावत है–"नई बात नव दिन, खेची-तानी तेरह दिन।' फिर तो सब भूल-भालकर मौज-शौक मे लग जाते हैं। फिर हम बुड्ढे ही घर मे भार-रूप पडे हैं। कुछ काम-काज भी नहीं कर सकते। तो मरने के बाद तो फिर सम्बन्ध ही क्या रह जाता है। इस प्रकार के ऊलजलूल विचार मन मे आते रहते हैं। यह कहते हुए लक्ष्मी सेठानी का गला भारी हो गया। और वह देखने लगी ऑखे फाड-फाड कर अपनी व पतिदेव की कडी मेहनत के बल पर बनाई बिल्डिग आदि को।

सास लक्ष्मी की इन बातो को सुनकर बडी बहू चन्द्रकला बहुत आत्मीयता दिखाते हुए बोली–सासूजी आप ऐसी ऊलजलूल बाते कैसे कर रही हैं। हम आपकी बहुऍ आपके प्रति खाली स्वार्थभरी ऊपरी श्रद्धा-भक्ति ही नहीं रखती हैं। क्या आप जैसी सास को पाकर कभी भूल सकती हैं ? आप विश्वास रखो कि जब भी आप काल करेगे तो आपकी यादगार मे भी प्रतिवर्ष उस तिथि को

आपके नाम से दान-पुण्य करूँगी। इतने मे दूसरी बहू सुमगला बोली–सासूजी, मैं भी आपको विश्वास दिलाती हूँ कि उस दिन प्रतिवर्ष आप दोनो के स्मृति-दिवस के उपलक्ष्य मे सभी बहन-बेटियो, रिश्तेदारो को बुलाकर जिमाऊँगी। इस प्रकार दोनो जेठानियो की बात सुनकर तीसरी बहू शशिकला बोल उठी–सासूजी, मैं तो उस दिन आपको इस भव व पर-भव मे भी शान्ति मिले, इसके लिए अखण्ड महामत्र का जाप कराके सबको बड़े थाल मे मिठाई भरकर प्रभावना बाटूगी। इस प्रकार तीनो बड़ी बहुए लटके-झटके के साथ अपनी बातो से सास को खुश करके अपनी भक्ति का प्रदर्शन करने लगी। इधर पास मे बैठी सासूजी के पाव दबाती हुई छोटी बहू मोहिनी चुपचाप गभीर मुद्रा धारण करके तीनो जेठानियो की बाते ध्यानपूर्वक सुन रही थी। तब उसकी ओर देखकर तीनो बहुएँ व्यग्यात्मक भाषा मे कहने लगीं–सासूजी राज ! हमने तो आपकी भक्तिभावना और हृदय मे आपकी यादगार बनाने हेतु अपने दिल के भाव रख दिये। अब आपकी प्राणप्यारी छोटी बहू, जिसको आप अपने पीछे अपनी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी समझती हैं और वह भी आपकी इसी उद्देश्य से दौड-दौडकर सेवा करती है जिससे आप भी उसको अपने हृदय का हार व बुढापे का आधार समझती हैं। हालाकि हम तो अपने हृदय से

आपकी निष्काम भाव से जितनी सेवा कर सकती हैं, बिना दिखाये करती हैं, क्योकि हमको तो आपकी सम्पत्ति की कोई आवश्यकता नही है। आपके आशीर्वाद से हमारे पतिदेवो ने अपनी कुशलता से श्वसुरजी से भी दस गुणा कारोबार बढा लिया है। साथ ही हमारे पीहर से भी इतना माल मिला है और मिलता रहता है कि जिससे किसी बात की कमी नहीं है। परन्तु इस बेचारी के तो न तो पीहर से कुछ मिला, न मिलने की आशा है। और इधर इसके पति (हमारे छोटे देवर) गणेश भी ऐसे मिले हैं कि कुछ कमाना जानते ही नहीं। इसलिये इसको तो अब आपके धन पर ही सारी आशा है। इसलिये आप इसके मन की बात भी जान तो लीजिये कि आपकी यादगार मे क्या गुल खिलायेगी ताकि आपके प्राण भी निकल जाये तो कम से कम आपको सतोष तो रहे। ऐसा कहकर वे तीनो ऑखे मटकाती हुई उसकी ओर देखने लगी और बोली—फरमाइये देवरानीजी ! आप जो इतनी सासूजी की दौड-दौड कर सेवा करती हैं और सासूजी राज भी आपके ऊपर पूर्ण मेहरबान हैं तो इनको भी आपकी सच्ची भक्ति का एहसास हो जाय ताकि अतिम समय इनके प्राण शाति से निकल सके।

छोटी बहू मोहिनी इतनी देर तक तो अपनी तीनो जेठानियो की बातो को बडी धैर्यता के साथ सुन रही थी

और यह सोचकर कि मेरी तो ये पूज्य हैं और बडे घर की बेटिये हैं, तीनो जेठ भी कमाऊ व होशियार हैं। और अपनी होशियारी से सारे परिवार पर अपनी धाक जमा रखी है। पर बार-बार वचनो के विषभरे व्यग्यबाण उसके हृदय को उद्वेलित करने लगे। इतनी दौड-धूप करने के बाद भी अपने लिए तो कोई बात नहीं, पर पतिदेव के प्रति ऐसे उपेक्षा भाव को देखकर तो उसका मन व्यथित होने लगा और जाग उठा उसका अन्तर स्वाभिमान। और बोली--मेरी पूज्य जेठानीजी, आज आप तीनो के सास-श्वसुरजी के प्रति प्रदर्शित भक्ति-भाव और इनके मरने के बाद भी उसको साकार रूप करने की आपकी विचारधारा को सुनकर मैं प्रमुदित हो उठी। साथ ही आपने मेरे मन की भावना को भी अभिव्यक्त करने हेतु फरमाया, यह आपकी बडी कृपा है।

लेकिन आप जानते ही हैं कि हमारा जीवन तो आपकी कृपा पर ही चल रहा है। आपके सामने हमारी औकात ही क्या है ? फिर भी आप अपनी सासूजी की बहुत बडी प्रीति दिखाकर उनकी यादगार मे जो-कुछ करने के भाव व्यक्त कर चुकी हैं और मैं भी इनकी एक बहू बनकर इस घर मे आई हूँ तो "फूल नहीं तो पाखुडी सही' वाली कहावतानुसार कुछ करना अपना कर्तव्य समझती हूँ। इसलिये मेरे मन मे भी सास-श्वसुर की

यादगार मे यदि इनके आशीर्वाद से पतिदेव और मेरा भाग्य जगे तो मैं चाहती हूँ कि इनकी यादगार मे एक विशाल नगर बसाकर उसमे इन्हीं के नाम से स्थाई धर्म-स्थान, हॉस्पीटल, पाठशाला, गरीब लोगो के लिए भोजनशाला आदि बनवाकर वृद्धाश्रम व अनाथालय की भी व्यवस्था करू। बस, मेरी यही अतर तमन्ना है। यह कहकर वह सासूजी के चरणो मे झुक कर आशीर्वाद मागने लगी।

अपनी छोटी देवरानी की उपरोक्त बात सुनकर तो तीनो जेठानियो के मन मे ईर्ष्या की आग भभक उठी और बोली वाह ! वाह ! देवरानीजी बाते तो आपकी बहुत ऊँची-ऊँची सुनने को मिलीं, पर मन मे आया कि इन बातो को बोलने से पहले अपने गिरहबान मे तो झाककर देख लेती कि मैं कितने गहरे पानी में हूँ। मेरे पीहर की स्थिति कैसी है। जहाँ उनका जीवन भी हमारे सहयोग पर टिका हुआ है। साथ ही हमारे देवरजी तो "अणकमाऊ को मीठा भोजन" की कहावत चरितार्थ कर रहे हैं। यह तो हमारी एक भाई के नाते कृपा ही समझो कि चाहे वो पशुओ की पूछ मरोडते हुए दिन भर खेतो मे मजदूरो के साथ मस्ती मारते रहते हैं फिर भी कुछ नहीं कहते और तुम्हारी और उनकी सारी सुख-सुविधाएँ जुटाते रहते हैं। छोटे मुँह बडी बात करने मे कुछ नहीं लगता। ऐसी बात

कहने के पहले अपने पति को पैसा कमाया कैसे जाता है, यह तो सिखाती ? तुमको मालूम क्या पडता कि एक-एक पैसा खून-पसीना बहाकर कैसे कमाया जाता है और कैसे परिवार व घर का खर्च चलाया जाता है ? केवल कल्पनाओं के महल चुनने मे जोर नहीं लगता है। मालूम तो तब पडता है जब उसको साकार रूप देवें। इसलिये देवरानीजी, बडे-बडे स्वप्न सजोना और कल्पनाओ के महल चुनना और कल्पनाओ के घोडे दौडाना बद करो। और बात भी अपनी औकात को देखकर करो। ज्यादा लम्बी-चौडी शेखिये बघारने मे कोई सार नहीं है। उससे तो कभी प्राप्त सुख-सुविधा भी छूट सकती है। इतना कहकर तीनों जेठानिया परस्पर बाते करती हुई मोहिनी पर उपेक्षाभरी दृष्टि डालते हुए चली गई ऊपर अपने कक्ष मे।

(5)

छोटी बहू मोहिनी अपनी तीनो जेठानियो के व्यग्यबाणो को सुनकर इतनी व्यथित हो गई कि उन बाणो ने उसका हृदय छलनी जैसा कर दिया। उसके हृदय मे आग-आग लग गई। वह मन मे चिन्तन करने लगी—धिक्कार है ऐसा परतन्त्र जीवन जीने से। वह उठकर सीधी अपने शयनागार मे चली गई और गहन चिन्तन मे डूब गई। आखिर इस निर्णय पर पहुँची कि

बस, अब इतनी बेइज्जतीपूर्वक इस घर मे रहने मे कुछ सार नहीं है। चाहे मजदूरी करके पेट भरना पडे अथवा भूखे ही सो जाना पडे, उसमे ही सतुष्ट रहना उचित है। पर ऐसे घर मे रहना उचित नहीं है। अब तो यहॉ से निकल जाना ही श्रेष्ठ है।

इतने मे उसका पति गणेश पशुओ की सार-सभाल करके वहॉ पहुँच गया। यकायक उसने अपनी पत्नी मोहिनी को देखा तो आश्चर्यान्वित हो गया और सोचने लगा कि क्या बात है। हमेशा इसका चेहरा जो गुलाब की तरह खिला रहता, जिसके चेहरे पर खुशी अठखेलियॉ करती रहती है, जिसकी मुस्कान मेरी थकान को मिटा देती, जो मेरे आते ही हर्षित होकर सामने आती और अपनी मृदुवाणी से मेरे मन का विषाद हरकर आह्लाद पैदा कर देती। वही आज एकदम उदास बनकर निढाल होकर बैठी है। न चेहरे पर मुस्कान, न खुशी। ऐसा गमगीन चेहरा कभी नहीं देखने मे आया, क्या कारण है ? अन्तर्मन मे बडा आश्चर्य करता हुआ उसके पास गया और बड़े प्रेमभरे मधुर शब्दो मे बोला—प्रिये ! आज मै ऐसा कैसे, क्या देख रहा हूँ। मानो सूर्य असमय मे निस्तेज हो गया हो। मानो राहु ने इसे ग्रसित कर रखा हो। ऐसे ही आज तेरा सदा हसता-मुस्कराता चेहरा मलिन निस्तेज बना हुआ है। तेरे चेहरे पर उदासीनता परिलक्षित हो रही

है। जिन नयनो मे प्रतिपल प्रेम का झरना प्रवाहित होता रहता था उन्हीं नयनो को आज मैं गमगीन देख रहा हूँ। ऐसी क्या बात हो गई जो तेरे अन्तर्मन को व्यथित कर रही है। क्या पीहर की याद सताने लग गई अथवा वहाँ से कोई दु खद समाचार आए अथवा मेरे किसी क्रियाकलाप से या वचनो से तेरा दिल व्यथित हुआ ? जो-कुछ भी हो वह स्पष्ट बता।

पतिदेव गणेश के इन वचनो ने तो मोहिनी की अन्त वेदना को नेत्रो के द्वारा बाहर प्रवाहित कर दिया। वह फूट-फूट कर रोती हुई कहने लगी– प्राणेश्वर ! अब मैं इस घर मे रहना नहीं चाहती। क्योकि अब आपकी भाभियो के विषभरे तानो के तीर सहे नहीं जाते। रात-दिन चाहे कितना ही इस परिवार के लिये मरो, खपो लेकिन हमेशा सूर्योदय से सूर्यास्त तक यही ताने सुनने को मिलते हैं कि बाप के घर से क्या लेकर आई, यह तो हमारे पतियो की कृपा समझो कि उन्होने कडी मेहनत करके पैसा कमाया और तुम्हारी शादी की। और तुम दोनो का पालन-पोषण कर रहे हैं। तेरे पति गणेश "अणकमाऊ को मीठा भोजन" की कहावत को चरितार्थ करते हुए रात-दिन पशुओ के पूछड़े मरोडते हुए मजदूरो के साथ खेतो मे मस्ती मारते हुए घूमते रहते हैं और आ जाते हैं दोनो समय भोजन करने सबसे पहले। पैसा कैसे

कमाया जाता है उन्हे क्या मालूम पड़ता है।

वैसे तो ऐसे ताने हमेशा किसी-न-किसी बहाने सुनते-सुनते परेशान तो मैं थी ही फिर भी मन मारकर सह लेती, यह समझकर कि बडे हैं। इसलिए मैंने आज तक कभी आपको भी मालूम नहीं पडने दिया पर आज तो हद से बाहर की बात हो गई। अभी घटे-भर पहले ही, आप नहीं आये थे तब, गरमी के कारण मैंने सासूजी का खाट बाहर लगा कर बिस्तर बिछा के चौक मे सुला दिया था। इतने मे आपकी तीनो भाभिये भी आ गईं। और बैठ गई सासूजी के पास में। और करने लगी पाव दबाने का अभिनय और साथ ही मीठी-मीठी बातो के लटके-झटके।

इतने मे सासूजी ने कहा—अब थोडे दिन और सेवा करलो जिदी हूँ तब तक, न मालूम कब सास निकल जावे। फिर मरने के बाद कौन याद रखेगा कि हमारे भी सासुजी थे। इस बात को सुनकर आपकी बडी भाभी कहने लगी—मैं प्रतिवर्ष उस दिन की यादगार मे दान-पुण्य करूँगी। दूसरी ने कहा—मैं सारे परिवार को जीमाऊँगी। तीसरी बोली—मैं अखण्ड महामत्र का जाप रखूगी। इसके बाद कहने लगी—यह आपकी प्यारी छोटी बहू, जो आपके धन की आशा मे दौड-दौड कर सेवा का नाटक करती है, आप भी कहती हैं—मेरी सेवा तो छोटी बहू ही करती है इसलिये मेरा जेवर वगैरह उसी को दूगी। अब उसी को

पूछ लीजिये कि यह आपके मरने के बाद क्या गुल खिलायेगी। ऐसा कहकर मेरी ओर ताकने लगी।

तब मैंने भी उनके सामने कह दिया कि यदि आपके आशीर्वाद से हमारा भी भाग्य साथ देगा तो मैं आप दोनो के नाम से एक नगर बसाकर उसमे दानशाला, पौषधशाला, विद्यालय, अस्पताल बनाकर गरीबो की सेवा का कार्य करूँगी। यह बात सुनते ही वो ऐसे-ऐसे वचनो के तीर मार-मार कर सासूजी के सामने मुझे अपमानित करने लगी। इसलिये पतिदेव ऐसे परतत्र जीवन से या तो मरना अच्छा या यहाँ से निकल जाना अच्छा। चाहे भूखो ही मरना पडे या मेहनत मजदूरी ही क्यो न करनी पडे। मैं कष्ट सह लूगी पर अब इस घर मे तो नहीं रहूगी।

साथ ही यह भी आपको विश्वास दिलाती हूँ कि मैं आपको किसी प्रकार का कष्ट नहीं आने दूगी। पहले आपको खिलाकर फिर मैं खाऊँगी। भरना तो दो जनो का पेट ही है, जो मैं अकेली मजदूरी करके भी भर लूगी। यहाँ इतनी रात-दिन मेहनत करके इनकी जी-हुजूरी करते रहने पर भी इतने परतत्र और नौकरो से भी गई-बीती जिन्दगी जीने के बदले स्वतन्त्र जीवन जीते हुए सुख की नींद तो सो सकेगे। इसलिये आप मन मे जरा भी मत घबराइये। वे सोचते हैं कि सब हमारी मेहनत से ही जी रहे हैं। तो हम भी अपने भाग्य की परीक्षा करके

देखें। मुझे तो पूर्ण आत्मविश्वास है कि हमारी सद्भावना और पुरुषार्थ से हमारा भाग्य पलटेगा और हम इनसे भी अधिक सुख का जीवन जीते हुए, मैंने जो सासूजी को वचन दिया है, उसका भी पालन करके दिखायेगे।

इसलिये प्राणेश्वर ! अब आप जरा भी मन मे भय न लाते हुए हिम्मत धारण करके आज रात्रि मे ही चुपचाप अपने सामान को व्यवस्थित कर, कोठी मे बद करके निकल जाइये। पति गणेश मोहिनी की बात सुनकर बोले–प्रिये ! यह तो मैं स्वय अपने भाइयो, भाभियो के दुष्ट व्यवहार से पूरा दु खी हूँ और यह भी अनुभव करता हूँ कि वे हमको एक नौकर-नौकरानी से भी हीन समझते हैं। इसलिये मेरे मन मे भी इस घर को त्याग कर अन्यत्र जाने का कई बार विचार बना।

माताजी-पिताजी व तेरा विचार करके ही मन मारकर बैठा हुआ हूँ। अब जब तेरा भी विचार बन गया है तो बस, चलने मे ही सार है। बस, फिर क्या था ? मोहिनी ने सारा सामान एक कोठे मे बद करके ताला लगा दिया और चाबी ऐसे स्थान पर रख दी जो सहज किसी के हाथ नहीं आ सके। और साथ मे कुछ आवश्यक बर्तन, कपड़े व सामायिक के उपकरण के साथ बची हुई रोटी, सब्जी एक टिफिन मे भरकर थोड़े-बहुत रुपये थे, वे अपने साथ ले लिये और पिछली रात्रि को महामत्र का

स्मरण करके अपने भाग्य व पुरुषार्थ पर भरोसा करके चल पडे।

(6)

चलते-चलते प्रात ब्रह्मवेला मे एक स्थान पर, जहॉ एक धर्मशाला व पास ही कुऑ और उससे पानी निकालने की डोल और रस्सी पडी हुई देखकर विचार किया औा अभी वहीं रुककर थोडा विश्राम करने हेतु रुक गये। थोडी-सी निद्रा के बाद मोहिनी उठी और पतिदेव को जगाया और कहने लगी—अब आप उठ जाइये ताकि अपन बारी-बारी से शौच निवृत्ति करके फिर कुछ धर्म-जागरण करे। क्योकि हमारी सफलता मे यही सहायक बनेगा। साथ ही परलोक का भी पाथेय होगा। इतने दिन तो घर के गोरख-धधो मे हमारा समय ऐसे ही पूरा हो जाता था। जी चाहते हुए भी कुछ नहीं कर सकते थे। आज हमारे सुप्रभात का उदय हुआ है। इसकी शुरुआत हम धर्म-जागरणा से करेगे।

पत्नी की बात को सुनकर गणेश भी उठा और शौच आदि से निवृत्त हो, आकर मोहिनी के पास बैठ गया। तब उसने अपने साथ लाये सामायिक उपकरण निकाले और अपने एव पतिदेव के लिये अलग-अलग आसन बिछाकर खुद के व पतिदेव के मुँह पर मुँहपत्ती

बाध के, आज प्रथम अवसर होने से दोनो ने सवर धारण कर लिया और पतिदेव को माला हाथ मे देकर नमस्कार महामत्र का जाप पहले खुद बोलकर पतिदेव को लयबद्ध बोलने का आग्रह किया। गणेश ने एक-दो बार हिचकिचाते अशुद्ध उच्चारण किया। फिर उसके भी जम गया। दोनो के मधुर लय मे महामत्र के स्मरण से वहॉ का सारा ही वातावरण शात-प्रशांत हो गया। साथ ही उनके मन मे भी आज परम शाति का अनुभव होने लगा।

उसके बाद मोहिनी बोली—पतिदेव अब सूर्योदय भी हो गया है और हमे आगे भी बढना है। इसलिये कम से कम, ज्यादा नहीं तो नवकारसी का तप तो कर ही ले जिसका समय सूर्योदय के बाद अडतालीस मिनट का होता है। वैसे रात्रि को हम घर मे भी नही खाते थे। लेकिन प्रात होते ही आपको कार्य मे लगना पडता था। इसलिये सूर्योदय के साथ आपको खाना पडता था। पर आज ऐसी कोई अडचन नहीं है और उसका समय भी अब आने वाला ही है। तब तक अपना सामान भी व्यवस्थित करले ताकि नवकारसी आते ही कुछ जो साथ है, उसको खाकर ही रवाना हो जायेगे। ऐसा कहकर उसने खुद के साथ पतिदेव को भी नवकारसी के प्रत्याख्यान करा दिये और दोनो सामान व्यवस्थित करने मे लग गये। इतने मे मोहिनी की दृष्टि वहीं कोने मे बैठी एक कुतिया

पर पडी जो प्रसव पीड़ा से पीड़ित हो रही थी। उसने उसे देखकर सोचा—बच्चे पैदा होते ही इसका पेट खाली होने से यह अपने बच्चो को ही खा लेगी इसलिए यदि उसको खाने के लिए रोटी मिल जाये तो बच्चे बच सकते हैं। ऐसा सोचकर ज्यो-ज्यो बच्चे पैदा होते, त्यो-त्यो एक-एक रोटी डालती जाती। ऐसे करके सात-आठ रोटियाँ डालदी। जिससे सब बच्चे बच गये। इससे मोहिनी को हार्दिक प्रसन्नता हुई। साथ ही गणेश ने भी उसकी अनुमोदना करते हुए कहा—भाग्यवान्, तूने तो इन बच्चो को अभयदान देकर महान पुण्योपार्जन किया है। अब शेष बची रोटियॉ दोनो ने खाई और आगे चल पडे।

(7)

लगभग चार-पॉच मिलोमीटर चलने के बाद ही एक गॉव आ गया जिसको देखकर उनके पाव वहीं रुक गये। एक साथ इतना चलने से थकान भी महसूस होने लगी। साथ ही भूख भी तीव्र सताने लगी। इसलिए एक मकान के बाहर बने हुए चबूतरे पर सामान रखकर विश्राम करने लगे। इतने मे उस घर मे से एक वृद्धा बाहर आई और पूछने लगी—आप कहॉ से पधारे हो ? आप का नाम क्या है ? इस प्रकार बुढिया के पूछते ही तत्क्षण दोनो ने उनके चरणो मे नमस्कार किया और

अपना परिचय बताते हुए कहने लगे—माताजी, हम अपने भाग्य का परीक्षण करने घर का त्याग करके निकले हैं। और अब यह भाग्य जहॉ ले जाएगा, जैसा रखेगा, वैसे रहते हुए आगे बढ रहे हैं।

आज प्रात ही हम पीछे धर्मशाला मे ठहरे थे। महामत्र के जाप के पश्चात् नवकारसी आने पर साथ लाए भोजन को खाने की तैयारी कर रहे थे कि अचानक सामने कुछ दूरी पर ही कोने मे एक कुतिया ने बच्चो को जन्म दिया जिससे उसका पेट खाली हो गया। तब मैंने देखा कही पेट खाली होने से यह इन बच्चो को खा नहीं जाये, इसलिए हमने रोटियॉ उस कुतिया को खिला दी और उसका पेट भर जाने से वे बच गये। फिर शेष दो रोटी बची, उनको हम दोनो ने खाया और उसके बाद चलके यहॉ आ गये। अब कुछ विश्रान्ति करके आगे बढ जायेगे।

उस वृद्धा ने ज्योही यह बात सुनी तो सहज बोल उठी—अहो ! मेरा भी भाग्य जाग गया कि आप जैसे दयावान, धर्मात्मा पति-पत्नी का मेरे घर मे शुभागमन हुआ। बस, अब तो आपको मेरे यहॉ मेहमान बनकर भोजन स्वीकार करना है। मैं भी अकेली ही हूॅ इसलिये अभी सामायिक आदि से निवृत्त होकर उठी हूॅ। बस, थोडी घर की सफाई करके फिर भोजन बनाती हूॅ। तब

तक आप भीतर पधारिये और थोड़ा विश्राम कीजिये। यह कहकर बुढिया ने उनके लिये भीतर के कमरे मे चटाई बिछा दी।

वृद्धा मॉजी के अत्याग्रह से अपना सामान लेकर अन्दर चले आये। इधर बुढिया झाड़ू लेकर घर की सफाई करने लगी। यह देखकर मोहिनी शीघ्र उठी और वृद्धा मॉजी के हाथ से झाड़ू खींचकर कहने लगी–मॉजी आप अन्य कार्य देखिये। यह कार्य तो मुझे करने दीजिये। मैं बैठी हूँ और आप मेरे सामने झाड़ू निकाले, क्या यह नारी जाति के लीये शोभाजनक हो सकता है ? पर बुढिया इनकार करने लगी–नहीं, आप तो मेहमान हैं। आप से यह काम कैसे कराना उचित है। पर मोहिनी ने अत्याग्रह करके झाड़ू हाथ मे लेकर शीघ्र सारे घर की सफाई कर दी। फिर बुढिया रसोई बनाने बैठी तो वहॉ भी पहुँचकर रसोई करने बैठ गई। वृद्धा के लाख मना करने पर भी सारा भोजन बनाकर बोली–मॉजी, अब आप भोजन कर लीजिये। लेकिन वृद्धा कहने लगी–वाह, यह कैसे हो सकता है ? मेहमान तो भूखे बैठे रहे और मैं भोजन कर लू। नहीं, यह नहीं हो सकता, पहले आप भोजन कीजिए फिर मैं भोजन करूँगी।

तब उसने पहले गणेश को थाली परोसी और उसको भोजन हेतु बिठाया और फिर मोहिनी को भोजन

ताकि हम सामायिक प्रतिक्रमण करके इस प्राप्त सुअवसर का लाभ उठाले।

मोहिनी की इस बात को श्रवण करके गणेश बोला–प्रिये ! तेरी बात तो यथार्थ है पर मैं तो सामायिक प्रतिक्रमण क्या होता है उसको जानता ही नही हूँ। यह महामत्र का ज्ञान व स्मरण भी अभी-अभी कर पाया हूँ। तब मोहिनी कहने लगी–पतिदेव ! आपकी बात यथार्थ है। वहॉ हमारा सारा समय घर के कार्यों मे ही निकल जाता था। आप तो जानते नहीं, पर मैं तो सब पीहर से सीखकर आई थी। फिर भी वहॉ एक दिन भी उस गोरखधधे के आगे नहीं कर पाई। पर अब तो हमको हमारे महापुण्योदय से ऐसा सुअवसर प्राप्त हुआ है। इसका लाभ-उठाने के लिए मेरा इतना ही निवेदन है कि सामायिक आपको मै दिलाऊँगी और अडतालीस मिनट के बाद वापिस मैं पलवा दूँगी। यही बात प्रतिक्रमण की, जिसका आत्मशुद्धि मे बहुत बड़ा महत्त्व है। हम मानव हैं। जैन हैं और श्रावक कहलाते हैं। उसके कुछ नियमोपनियम होते हैं। जिनका पालन आवश्यक होता है और उनका पालन करते हुए यदि भूलवश या अज्ञानता से कोई दोष लग जाए तो उसका शुद्धिकरण विधिपूर्वक करने हेतु दोनो समय दिन-भर के पाप की शुद्धि हेतु देवसी, रात्रि सम्बन्धी पाप की शुद्धि हेतु राई, पन्द्रह दिन मे लगे पाप

की शुद्धि हेतु पाक्षिक, चार महीने के पाप की शुद्धि हेतु चौमासी और वर्ष-भर के पाप की शुद्धि हेतु सावत्सरिक प्रतिक्रमण, जिनका मूल नाम आवश्यक आराधना है, जो जीवन-साधना का मुख्य आधार है और साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका चारो तीर्थ के लिए अनिवार्य है।

इसमे सबसे पहले सब सावद्ययोग अर्थात् मन, वचन, काया से पाप- कार्य करने, कराने का त्याग करके समता भाव को धारण करते हुए फिर चउवीसथ्थ अर्थात् हमारे परमोपकारी तीर्थंकर प्रभु, जिन्होने दु ख से मुक्ति व सच्चे सुख की सिद्धि का मार्ग बतलाया, उनकी स्तुति करके फिर उनको वदन करके फिर अपने पाप की शुद्धि हेतु प्रतिक्रमण करके उन दोषो की शुद्धि हेतु कायोत्सर्ग करना और फिर आगे जीवन-विकास के हेतु कुछ-न-कुछ प्रत्याख्यान अर्थात् सकल्प ग्रहण करना। यह प्रतिक्रमण का उद्देश्य है। हमारे भवो-भवो के पुण्योदय से हमको जैन धर्म प्राप्त हुआ है। उसकी सार्थकता तब ही है जब हम उसके आवश्यक नियमो का तो आराधन करे।

मोहिनी की बात सुनकर गणेश कहने लगा—प्रिये ! मुझे तो आज मालूम पडा कि तू केवल दिखने मे ही भोली-भाली और सीधी-सादी दिखती है, पर तू तो वास्तव मे बहुत ज्ञानी है। तेरी बातो को सुनने से मुझे अपने-आप मे यह अनुभव हो रहा है कि भले मैंने जैन कुल मे जन्म

ग्रहण किया, पर कुछ भी उसका ज्ञान नहीं है। इसलिए अब तो इस मामले मे जैसा बतायेगी अथवा करेगी, वैसा ही मैं भी करूगा। इसलिये अब किस समय क्या करना, वह समझाती जा ताकि वैसे ही अतर श्रद्धाभाव से करता रहूगा।

पतिदेव गणेश की बात को श्रवण करके मोहिनी कहती है–पतिदेव ! सच्ची क्रिया का आधार तो श्रद्धा ही है। आप तो श्रद्धा के साथ मे जिस समय वदन करू, जिस आसन से मैं बैठू उस आसन से आप भी बैठ जाइये और एक बात का विशेष ध्यान रखना है कि मैं प्रतिक्रमण के पाठ बोलू और उसमे जब मैं मिच्छामि दुक्कड बोलू तब आप भी मिच्छामि दुक्कड का उच्चारण करे। इसका तात्पर्य है कि मेरे से कोई पाप हो गया हो तो वह पाप निष्फल हो। ऐसा कहकर वह विधिपूर्वक प्रतिक्रमण करने लगी और गणेश भी उसका अनुकरण करने लगा और मोहिनी ने पूरा प्रतिक्रमण सविधि सम्पन्न किया। फिर सामायिक पाल ली और अपने-आप में बडी शान्ति का अनुभव करते हुए गणेश बोला–प्रिये ! आज जीवन मे पहली बार ऐसी शान्ति का अनुभव हो रहा है। अब हमारे पुण्योदय से जो अवसर प्राप्त हुआ है उसमे अधिक से अधिक धर्म-ध्यान करना है। ऐसा कहकर दोनो निद्राधीन हो गये। पुन प्रात काल सूर्योदय के पहले उठ राई

प्रतिक्रमण करके निवृत्त होकर आगे प्रस्थान की तैयारी करने लगे।

(9)

गणेश व मोहिनी ने सारा सामान एकत्रित किया और साथ मे जो वृद्धा मॉजी ने बाधा था उसमे से थोडा नाश्ता करके नवकार मत्र का स्मरण करके दोनो ने आगे के लिए प्रस्थान किया। वहॉ से कुछ दूर पहुॅचे ही थे कि आगे भयकर अटवी आ गई। चारो तरफ घनी झाडियॉ और फिर उसमें कभी शेर दहाड़ते तो कभी हाथी चिघाडते, कभी चीता, भालू, लोमडी आदि प्राणियो की आवाज से सारा वातावरण भयावह बना हुआ था। दोनो पति-पत्नी एक-दूसरे को धैर्य प्रदान करते हुए चल रहे थे।

इतने मे अचानक भयकर हवा का तूफान आ जाने से सारे जगल मे अधियारा छा गया जिससे एक-दूसरे को आपस मे न देखा ही जा सकता था, न एक-दूसरे की आवाज ही सुनी जा सकती थी। ऐसी स्थिति मे जिसको जिस दिशा मे जो पगडडी मिली, उसी पर चल पडे। हवा के तीव्र वेग के साथ चाल की गति भी तीव्र हो गई। और हुआ यह कि दोनो एक-दूसरे से बिछुड़ गये। लगभग चार-पॉच घटे बाद वह तूफान थोडा कम पडा जिससे सामने वाली वस्तु व रास्ता साफ दिखने लगा। तब थोडी

मन मे शान्ति हुई। पर दोनो एक-दूसरे को नहीं देखकर विचार में पड गये और लगे एक-दूसरे को आवाज लगाने। लेकिन एक राह मे हो तो फिर भी देख-मिल सकते हैं। वहाँ तो दोनो की दिशा ही अलग हो गई थी। एक पूर्व और एक पश्चिम जैसी, जिससे और दुगुनी परेशानी पैदा हो गई। गणेश तो पुरुष था। उसके लिए केवल मोहिनी की ही चिन्ता थी।

पर मोहिनी के लिए तो पतिदेव की और साथ ही अपने शील की भी भारी चिन्ता थी। इससे चिन्तित होकर पूर्ण रूप से बडी भयभीत बनी हुई सहमी-सहमी-सी वन मे मन को दृढ बनाकर बढने लगी। इतने मे सामने दृष्टि प्रसार कर देखा तो कुछ लोग अपने मुँह पर कपडा बाधकर हाथो में शस्त्र धारण किये हुए उसकी ओर ही आ रहे हैं। यह देखकर पहले तो मन मे घबरा गई। फिर सोचा, घबराने से तो और बात बिगड सकती है। इसलिए वह अपने मन को दृढ बनाकर यह सोचने लगी कि मुझे डर किस बात का ? मेरे पास तो अपने रक्षा कवच के रूप मे महामत्र की महान शक्ति है। उसमे उसी समय एक ऐसी दिव्य शक्ति का सचार हुआ कि उससे वह बडी विचित्रता से विभिन्न आवाजो मे महामत्र का ऐसे जोर से उच्चारण करने लगी कि जिससे सारा जगल गूजने लग गया। हवा से उसका सारा देह तो धूल-धूसर बन ही

गया था, फिर सिर के सारे केश भी बिखर गये थे जिसके कारण ज्योही यह आवाज डाकू दल के कान मे पडी तो वे सब भयभीत हो गये, यह सोचकर कि यह तो वनदेवी है। कहीं हमारा अनर्थ नही कर दे इसलिये अब हमारे लिये श्रेयस्कर यही है कि इसको हम अपने पास जो भी है, भेट चढाकर खुश करके इसका आशीर्वाद प्राप्त करे। बस, यह सोचकर सब डाकुओ ने दूर से अपने पास जो भी धन चोरी करके लाये थे उसको पूरा का पूरा थोडी दूर पर ढेर लगा दिया और वहीं से साष्टाग प्रणाम करते हुए बडे भयभीत होकर गिडगिडाते हुए शब्दो मे कहने लगे–धन्य हो, धन्य हो आज हमारे प्रबल पुण्योदय से आपके दर्शन हो गये। हम अज्ञानतावश आपकी इस सीमा मे आधी तूफान के कारण राह भटकने से आ गये। हम हमारी इस भूल की क्षमायाचना चाहते हैं। आप हमे क्षमा करके उसके बदले हमारी यह भेट स्वीकार करे और हमको शुभाशीर्वाद दे। उन डाकुओ की इस बात को श्रवण करके पहले तो वह यह सोचकर कि कहीं यह नही जानले कि यह तो देवी नहीं कोई अकेली स्त्री है इसलिये वह बडी धैर्यता के साथ पुन अनेक किलकारियो और आवाजो के साथ महामत्र का उच्चारण करने लगी जिससे वे और भयभीत होकर गिडगिडाने लगे और क्षमा मागने लगे और साथ ही विनय करने लगे–हे देवी ! यह भेट स्वीकार करे।

तब मोहिनी ने आशीर्वाद की मुद्रा मे अपना दाहिना हाथ ऊँचा कर लिया और जाने का इशारा कर दिया जिससे उनके मन मे थोडा धैर्य बधा। यह सोचकर कि वनदेवी ने हमारे अपराध को क्षमा करके जाने का इशारा कर दिया है। इसलिये मन मे थोड़े हर्षित होकर पुन नमस्कार करके सब माल वही छोडकर उल्टे पैरो भागने लगे। इधर मोहिनी ने देखा कि कहीं वापस नहीं आ जाए इसलिए उसने पुन विचित्र किलकारियो के साथ सारे वन को गुजा दिया जिसको सुनकर के तो वे इतने भयभीत हो गये कि मानो वह हमारा पीछा कर रही हो। इसलिए पूरी शक्ति लगाकर दौडने लगे और दौडते -दौडते वन पार होने के बाद ही शाति की सास ली।

इधर मोहिनी ने भी देखा कि यह सब महामत्र के स्मरण की ही शक्ति है कि आज इस विकट परिस्थिति मे मैं इस महान सकट से बच गई। यदि कही इनके हाथों पड जाती तो न मालूम मेरी कैसी दुर्दशा हो जाती। वैसे महामत्र की शक्ति पर तो पहले ही उसकी दृढ आस्था थी, अब आस्था और दृढीभूत हो गई। अब उसने थोडी देर पूर्ण स्थिर योग से महामंत्र का स्मरण किया जिससे उसके मन मे पुन शाति का सचार हुआ। फिर अपने-आप को निर्विघ्न समझ कर उस धन के ढेर को देखा और एक कपडे में बाधा और आगे चली।

कुछ दूरी पार करने पर वन की सीमा समाप्त होते ही एक पत्थर की बडी शिला वहॉ जमीन पर कुछ ऊॅचाई पर दिखी। ठीक उसी के पास सुन्दर कल-कल करते बहता झरना, उसके पास मे ही वृक्षावलियो से घिरा विशाल मैदान। इस प्राकृतिक ऐश्वर्य से सम्पन्न स्थान को देखकर मन आकर्षित हुए बिना नहीं रहा। इधर पूरी तरह से थक चुकी थी इसलिये वहीं विश्राम करने का निश्चय कर लिया।

थोडी देर बाद वहॉ पर बैठने के बाद सोचा कि कही पास मे बस्ती हो तो वहॉ चली जाऊॅ। पर मन उसका आगे जाने हेतु तत्पर नही हो रहा था। वह उसे वहीं रुकने की प्रेरणा दे रहा था कि यह स्थान तेरे विचारो को साकार रूप देने के लिए सर्वोत्तम है। इसलिये निर्भय बनकर महामत्र की साधना करके उसीके सबल से यही पर कार्य प्रारम्भ करना ही श्रयेस्कर है।

इस प्रकार की मन मे उठती आवाज को सुनकर मोहिनी ने भी वही रुकने का निश्चय कर लिया और चढ गई उस शिलापट्ट पर। फिर निहारने लगी चारो तरफ के दृश्य को, जो बडा रमणीक व मनभावन लग रहा था। इतने मे उसकी दृष्टि शिलापट्ट के पीछे पडी तो देखा वहॉ एक छोटी-सी गुफा भी थी जिसमे आराम से बैठा और सोया भी जा सकता है। साथ ही यदि एक पत्थर

खिसका कर रख दिया जाय तो उसमे कोई हिंसक पशु भी प्रवेश नही कर सकता। साथ ही पास ही मे एक विशाल वट वृक्ष भी था जिसका तना बहुत मोटा और भीतर से खोखला भी है। जिसमे भी समय पर घुसकर अपनी रक्षा की जा सकती है। फिर ऊपर की पहाडी पर देखा तो उसकी दृष्टि मे कुछ किलोमीटर की दूरी पर ही एक विशाल नगरी भी दृष्टिगत हुई। इन सब बातो पर चिन्तन करके आखिर उसने अपने मन मे यही दृढ निश्चय कर लिया कि अब यहीं रहना हर बात में लाभदायक है।

(10)

यह दृढ निश्चय मन में कर लेने के बाद पुन पहाडी से नीचे उतरी और सबसे पहले इस गुफा की सफाई की और अपना सारा सामान उसमें व्यवस्थित रखकर फिर पास पडी हुई एक छोटी शिला को उठाकर लाई और गुफा के मुँह के सामने रखी जिससे ऐसा लगा मानो उसका दरवाजा ही बन गया। फिर वट वृक्ष के तने के भीतर जो खोखला इतना था कि उसमे आराम से छुपकर बैठा जा सकता था, उसकी भी सफाई की। उसके मुँह पर भी एक छोटी शिला रख दी। जिसको आधी खिसका (हटा) कर उसमे से निकला भी जा सकता

था और घुसा भी। इस प्रकार सारी व्यवस्था करके उसने अपने पास का लोटा निकाला और पास के बहते निर्मल झरने से कपडे द्वारा छानकर पानी भर के लाई और जो-कुछ बचा था वह भोजन करने बैठी। लेकिन एक ग्रास भी गले नहीं उतरा।

उसकी ऑखो से ऑसू प्रवाहित होने लगे और सोचने लगी—वाह रे भाग्य ! तेरे पर विश्वास करके तो हमने स्वतत्र जीवन जीने का सकल्प लेकर घर-परिवार छोडा लेकिन आज बीच मे ही तूने हम दोनो पति-पत्नियो मे विछोह पैदा कर दिया। अब वो किधर और मैं किधर। इसकी खबर भी किसको कौन देगा ? और अब पुन कब हमारा मिलन होगा ?

फिर मोहिनी ने पुन मन में थोडा धैर्य धारण करके उसी महामत्र का एकाग्रता से स्मरण किया तो उसके अन्तर्मन मे एक दिव्य शाति का सचार हुआ और सोचने लगी—जो होता है वह सब अच्छा ही होता है और अच्छा ही होगा। वियोग हुआ है तो पुन मिलन भी होगा। आज विकट वन और भयकर आधी-तूफान से महामत्र ने ही बचाया और सहज इतना बडा धन का ढेर प्राप्त हो गया। और जो अपने सकल्प के अनुरूप स्थान व साधन भी जो कुछ प्राप्त हो गया है तो अब इसी मे अपना पूर्ण समर्पण करके सर्वचिताओ से मुक्त बनकर आगे की योजना

मे अपनी शक्ति को लगाना है। यह समस्या व सकट की घडी तो महासती दमयती, अजना आदि मे भी आई थी। उन्होने भी पूर्ण धैर्यता से इसी महामत्र के सबल से पार की, तो मुझे घबराने की क्या आवश्यकता है। रही बात पतिदेव की, तो मैंने नारी होकर भी ऐसी हिम्मत धारण की है तो वे तो पुरुष हैं। मुझे पूरा आत्मविश्वास है कि यही महामत्र उनकी भी रक्षा करेगा और एक दिन हमारा मिलन करायेगा।

ऐसा सोचकर उसने जैसे-तैसे मन को दृढ बनाकर थोडा बहुत भाया, वह भोजन किया और फिर पानी पीकर कुछ देर वहीं बैठी ओर उस प्राकृतिक दृश्य को निहारने लगी। और जब सूर्यास्त होने लगा तो उस गुफा मे जाकर पुन शिलापट्ट से उसका मुँह बद करके सामायिक प्रतिक्रमण करके फिर महामंत्र का स्मरण करके अपने पतिदेव के प्रति शुभकामना भाकर सो गई। गहरी थकान के कारण निद्रा भी ऐसी आई कि प्रात सूर्योदय के कुछ समय पहले ही एक विशिष्ट स्वप्न-दर्शन के साथ खुली, तो जल्दी से उठी और महामत्र का स्मरण करके प्रभु-प्रार्थना मे तन्मय हो गई। साथ ही उसी समय स्वप्न पर विचार करने लगी तो उसका मन-मयूर नाच उठा। और कहा कि मेरा हर मनोरथ इसी जगह सफल होगा। इसलिये मुझे कुछ जप-तप का अनुष्ठान करना श्रेयस्कर है।

इसका निश्चय करके फिर अनुमान से सामायिक का समय पूर्ण हुआ जानकर पाल ली और फिर देव, गुरु, धर्म को विधिवत् वदन करके अपने पतिदेव गणेश के प्रति शुभकामना करके गुफा का द्वार खोलकर पुन व्यवस्थित करके शौच निवृत्ति हेतु गई और उससे निवृत्त होकर पुन उसी स्थान पर आ गई। अब आज खाने को तो कुछ पास मे रहा नही। इससे सोचा कि क्यो नहीं आज सहज योग मिला है तो कुछ तपस्या करली जाय। ऐसा सोचकर उपवास पच्चख कर उसी शिलापट्ट पर ध्यान मे बैठकर महामत्र का पूर्ण एकाग्रता से स्मरण करने लग गई।

(11)

करीब एक घटे तक ध्यान-साधना के बाद जब ऑख खोली तो देखा सामने कुछ मयूरों ने नृत्य करते-करते अपने पख छोड दिये और अपने-आप को हल्का महसूस करके उड गये। उन पखो के ढेर को देखकर मोहिनी उठी और उन मयूरपखो को एकत्रित करके गुफा मे रख दिया और बैठकर उनकी एक टोकरी व पखा बना लिया जो दिखने मे बडे मनमोहक लगने लगे। उनको एक तरफ रखकर वह पुन ध्यान मे बैठ गई और उसी मन की एकाग्रता से महामत्र का स्मरण करने लगी।

इतने मे वहाँ एक ग्वाला अपने पशुओ को झरने

मे पानी पिलाकर वापिस जाने लगा तो अचानक उसकी दृष्टि मोहिनी पर पड गई। ज्योही उसने देखा तो वह हतप्रभ हो गया और टकटकी से उसकी ओर देखकर सोचने लगा कि हो-न-हो यह तो इस वन की देवी है। पहले तो एक बार मन मे भयभीत हुआ। परन्तु फिर सोचने लगा कि मैंने लोगो के मुँह से सुना है कि प्रबल भाग्योदय होता है उसको देव-दर्शन होते है। लगता है आज मेरे भाग्योदय से इस वनदेवी के दर्शन हुए हैं। इसलिए यदि मैं इससे भयभीत होकर भाग जाऊँ तो यह रुष्ट होकर कही अनिष्ट भी कर सकती है। और यदि इसकी भक्ति करू तो यह प्रसन्न होकर मेरा उद्धार भी कर सकती है।

ऐसा मन मे विचार करके पूर्ण धैर्य धारण कर पहुँच गया शिलापट्ट के पास और अन्तर्मन से नमस्कार करके कहने लगा—हे भगवती, आज मेरे महान पुण्योदय से महान कृपा करके मुझ दीन-दु खी, अनाथ, असहाय बालक को इस वन मे आपने दर्शन दिये। आज मै धन्य हो गया हूँ। मातेश्वरी मुझ पर दया कर। इस दुनिया मे मेरा कोई नही है। मेरे माता-पिता बचपन मे ही मर गये और परिवार वालो ने मेरी जमीन-जायदाद सब हडप करके घर से निकाल दिया। अब मैं पास ही की नगरी रत्नपुरी मे जीवनयापन करने सेठो के घरो की गायो को

वन मे चराकर पुन शाम को उनको ले जाकर सौंप देता हूँ और बदले मे जो-कुछ खाने-पहनने को दे देते हैं उससे जीवन निर्वाह करता हूँ।

अब हे जगदम्बे ! आज तूने दर्शन देकर मुझे धन्य कर दिया। अब मै तेरी शरण मे हूँ, अब मुझे तेरा ही आधार है। हे दयानिधे, इस भोले अनाथ बालक पर करुणा कर। इस प्रकार बोलता-बोलता वह जोर-जोर से फूट-फूट कर रोने लगा। अचानक इस प्रकार उसकी सारी बात और रोने की आवाज सुनकर मोहिनी ने अपनी ऑख खोली तो उसका हृदय दयार्द्र हो उठा। उसके चेहरे की सहज सौम्यता-सरलता को देखकर उसने उसको उठाया और उसके ऑसू पोछते हुए बोली–वत्स अब रो मत। तेरा भाग्योदय होने वाला है। पर उसके लिए तेरी मैं अनेक तरह से परीक्षाएँ लूगी किसी-न-किसी काम के माध्यम से, जिसको तू किसी को बिना बताए करके मेरे मन मे विश्वास पैदा कर देगा तो फिर तेरे सब दु:ख समाप्त होने मे कोई देरी नहीं लगेगी। बोल, क्या तेरी तैयारी है ?

इस बात को सुनते ही तो वह पुन अपना मस्तक चरणो मे झुकाकर फूट-फूट कर रोते हुए कहने लगा–हे मातेश्वरी ! तू मेरी चाहे जैसी परीक्षा ले लेना, मेरा तन-मन सब तुम्हारे चरणो मे समर्पित है। चाहे मेरा सिर

भी काटे तो कटा लूगा और कभी किसी के सामने यह बात प्रकट नहीं करूँगा। बस, आप मेरा उद्धार कर दे। मोहनी ने भी उसका नाम पूछते हुए कहा–भैया अब तू निश्चिन्त हो जा। मै अवश्य तेरे दु ख को दूर करूँगी। बस, अब ठीक इसी समय प्रतिदिन आना है। मैं यहीं पर तुझे दर्शन देऊँगी।

तब पुन उसने उसके चरणो मे मस्तक झुकाया और बोला–हे मातेश्वरी ! मेरा नाम धन्ना है। अब मेरे पर कृपा करना। मै प्रतिदिन इसी समय तेरी सेवा मे हाजिर होऊँगा। यह कह कर वह पुन मस्तक झुका कर देखने लगा। तब मोहिनी ने उस धन्ना के चेहरे को निहारा तो उसे विश्वास हो गया कि वास्तव मे यह निश्छलहृदयी है। इससे मेरे सकल्प को साकार करने मे बहुत बडा सहयोग मिल सकता है। ऐसा मन मे निश्चय करके बोली–बेटा ! अभी तुझे जाने की जल्दी तो नही है ? यदि जल्दी न हो तो एक कार्य आज करके आजा। कितनी दूर है यहाँ से रत्नपुरी नगरी ?

धन्ना यह बात सुनकर हर्षविभोर होकर कहने लगा–मातेश्वरी ! मेरे काम ही क्या है ? वैसे ही दिन-भर इसी वन मे ही गाये लाकर छोड देता हूँ। फिर कहीं ठडी छाया मे बैठे-बैठे दिन पूरा करके सध्या होते-होते शहर मे पहुँच जाता हूँ। जो यहाँ से करीब दो कोस (पाँच

किलोमीटर) के आस-पास ही है। आप तो फरमाइये मेरे लिए सेवा कार्य। मैं अभी करके वापस आ जाता हूँ। तब मोहिनी ने उसको वह मयूर पख वाली टोकरी और पखा दिया और बोली—इनको लेजाकर राजमहल के पास जाकर आवाज लगाना कि यह देवी प्रदत्त टोकरी और पखा कोई लेना चाहे तो ले सकता है। उसके बाद उसके बदले जो-कुछ दे वह किसी को बिना बताए लेके आ जाना।

(12)

धन्ना तत्क्षण मोहिनी द्वारा प्रदत्त टोकरी व पखा लेकर बडी-बडी सेठो की हवेलियों के पास आवाज लगाता हुआ कहने लगा—लो कोई देवी प्रसाद मयूर टोकरी और पखा। जिसकी मधुर सुरीली आवाज सुनकर एक बार तो बडी-बड़ी सेठानिये भी अपनी हवेली के बाहर आकर उन दोनो वस्तुओ को देखकर आश्चर्य करके लेने को तत्पर हो जाती लेकिन धन्ना तो रुका ही नही और सीधा देवी के निर्देशानुसार आगे बढकर राजमहल मे पहुँच गया और वही आवाज लगाने लगा जिसको सुनकर महारानीजी भी प्रभावित हो गई और देखते ही तो उन्होने ऊपर से एक दासी को नीचे भेजकर उन दोनो वस्तुओ को ऊपर मगवाया। तब धन्ना उसको देने के साथ ही बोला कि

जगल मे देवी के प्रसाद के रूप मे प्राप्त हुई हैं। इसके बदले जो आप देना चाहे वो दे दो। मैं उसको उनके स्थान पर रख दूगा। यह सारी बात सुनकर दासी दोनो वस्तुओ को लेकर रानी के पास मे पहुँची और उनके हाथो थमा दी और धन्ना की कही हुई सारी बात बता दी।

ज्योही रानीजी ने उसको देखा तो आश्चर्य मे पड गई और सोचने लगी–वास्तव मे देवी प्रदत्त ही लगती हैं क्योकि ऐसी कलाकारी मनुष्य की तो नहीं हो सकती है। हो-न-हो दोनो वस्तुएँ चमत्कारी लगती हैं। इसलिये इनको रख लेने से देवी-कृपा से कुछ लाभ ही लाभ हो सकता है। ऐसा सोचकर एक नीला और एक पीला पत्थर कपडे मे बाधकर दासी के साथ भेज दिया और बोली–उसे कह देना कि यह मेरी तरफ से देवी को भेट चढा देना। और भी तुझे कोई चीज प्राप्त हो उसे ले के आना।

यह बात सुनकर धन्ना ने वापिस दासी को कहा कि महारानीजी को कहना कि देवी ने ये बाते गुप्त रखने का निर्देश दिया है। साथ ही यह भी कहा है कि इसको गुप्त रखने पर ही इसका चमत्कार मिल सकता है। अन्यथा वे लुप्त भी हो सकती है। दासी धन्ना की सारी बात सुनकर पुन महल मे पहुँची और सारी बात रानी को ---- दी और धन्ना जल्दी मे पुन जगल की ओर रवाना हो

गया और पहुँच गया उसी स्थान पर।

लेकिन देखता क्या है कि पशु तो सब वहाँ सुरक्षित खडे हैं पर देवी के दर्शन नहीं हो रहे हैं जिससे उसका मन बेचैन हो उठा और जोर-जोर से आवाज लगता हुआ कहने लगा–हे जगदम्बा ! तू कहाँ चली गई। मैं तेरी आज्ञा का पालन करके आ गया हूँ। कुछ विलम्ब हो गया आने मे इसलिए तू मुझे क्षमा कर दे। मेरे से मत रूठ, जल्दी से प्रगट होकर दर्शन दे। तेरे सिवा मेरा उद्धार ही कौन करने वाला है। तेरे बिना अब मेरे जीवन का आधार व सहारा ही कौन है। इसलिए अब तू प्रगट होकर तेरी चीज को सभाल। महारानी ने तेरे को यह भेट चढाने हेतु जो दी है वह इसी मे है। मैंने खोलकर भी नही देखी। जैसी दी, वैसी की वैसी तुझे भेट कर रहा हूँ। यह कह कर उसने वह कपडे मे बधी हुई पोटली रख दी और फूट-फूट कर रोते हुए पुन अर्ज करने लगा–हे मातेश्वरी ! तू प्रगट होकर दर्शन दे और इसे सभाल।

धन्ना की इस आर्त पुकार को कानो से सुनकर वृक्ष के तने मे बैठी मोहिनी सब-कुछ ऑखो से देख रही थी लेकिन वह उसको नही देख पा रहा था। फिर उस रहस्य को अभी गुप्त रखना ही हितकर समझकर उसने विपरीत दिशा मे मुँह करके पहले तो अपने मुँह से घुघरू

की आवाज निकाली जिसको सुनकर धन्ना को यह विश्वास हो गया और सोचने लगा कि अब देवी प्रगट हो रही है। इसी आशा मे टकटकी लगाकर चारो दिशाओ मे अपनी दृष्टि पसारने लगा। लेकिन देवी तो दिखाई नहीं दी पर घुंघरू की आवाज तो गूंज रही है। इतने मे आकाश मे आवाज गूजी–वत्स ! तू आर्त मत हो, मैं तेरे से प्रसन्न हूँ। तू इसको यहीं रखकर चला जा और कल तू अवश्य यहीं आना। अभी तेरे हाथ से बहुत बडे-बडे कार्य कराने हैं। इसलिये कल जरूर आना और सारी बाते गुप्त रखना मत भूलना। यह अदृश्य आवाज सुनकर उसका मुरझा मन खिल उठा, हर्षित होकर देवी की आज्ञानुसार उस पोटली को वही रखकर पुन शीश झुकाया और जो आज्ञा कहकर गायो को लेकर रवाना हुआ और रत्नपुरी के मौहल्ले मे जाकर सबकी गायो को उनके मालिको को सभला दी और जो-कुछ खाने को दिया वह खाकर प्रतिदिन के नियम अनुसार चबूतरे पर रखी बोरियो को बिछाकर सो गया। पूरे दिन का थका होने से थोड़े समय मे ही देवी-दर्शन का चिन्तन करते-करते गहरी नींद मे सो गया।

(13)

पुन प्रात जल्दी उठा और देवी का स्मरण करके

अत मन से उसको नमन करके जल्दी से सेठो के घरो से गायो को खोलकर सबको इकट्ठी करके लाने लगा। प्रतिदिन के जैसे प्रात नाश्ते मे सेठानियो ने जो भी दिया, उसको लेकर जगल की ओर रवाना हो जाता और वहीं गायो को चराते हुए जब भी भूख लगती तब खा लेता। लेकिन आज उसको आश्चर्य हुआ कि सब सेठानियो ने आज विशेष रूप से तरह-तरह की मिठाई, नमकीन, फल वगैरह दिये। साथ मे पूडी-सब्जी भी। क्योकि कल त्यौहार था। सबके यहॉ से थोडा-थोडा करके उसके पास कई तरह की मिठाई और फल हो गये जिनको उसने अपने थैले मे डाला और यह चितन करते हुए गायो को लेकर जगल की ओर रवाना हो गया और सोचने लगा कि आज यह सब पहले देवी के भोग लगाकर फिर ही मैं खाऊँगा। ऐसा सोचकर जल्दी-जल्दी गायो को हाकता हुआ उसी स्थान पर पहुँच गया।

और जल्दी से ढाक के पत्तो की पत्तल बना कर लाया और सारी सामग्री को निकाल कर उसमें जमा दिया। फिर जहॉ मोहिनी शिलापट्ट पर ध्यान मुद्रा मे बैठी थी उस जगह आया और देवी के चरणो मे झुक कर प्रार्थना की और वह सामग्री से सजी पत्तल सामने रखी और कहने लगा–हे मातेश्वरी ! आज मेरा प्रण है कि यह मिष्टान्न, फल, भोजन सामग्री, आज आपकी कृपा से ही

जीवन मे पहली बार प्राप्त हुई है इसलिये पहले आपका भोग लगने के बाद ही उस बचे हुए प्रसाद को मैं खाऊँगा। इसलिए मेरी अर्ज स्वीकार करने की कृपा करके आप भोग लगाइये। ऐसा कहकर जोर-जोर से रोने व गिड़गिडाने लगा। उसको इस प्रकार रोते-गिडगिडाते देखकर मोहिनी का ह्रदय भी द्रवित हो उठा और मन मे सोचने लगी–यह ईमानदार और पूर्ण निष्ठावान है इसलिए अब इसको देवी के भ्रम मे न रखते हुए इसे अपना धर्मभाई बनाकर इसी के सहारे से आगे की योजना बनानी चाहिए। क्योकि उस उद्देश्य की पूर्ति हेतु धन की तो कोई कमी नही है। इतना धन तो उन डाकुओ का मिल गया और अब ये दो रत्न और मिल गये जो भी बहुत कीमती हैं और आवश्यकतानुसार धन तो मयूर पख की टोकरी और पखे के समान और वस्तुएँ बनाकर इसके माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।

इसलिये अब इसको ज्यादा भ्रमित नहीं रखते हुए आत्मीयता से अपनाने मे ही सार है। यह निश्चय करके मोहिनी ने अपने चेहरे पर मद मुस्कान बिखेरते हुए एक धागा हाथ मे लिया। धन्ना के हाथ मे बाधते हुए बोली–भैया आज से तुम मेरे भाई हो और मुझे आज से तुम देवी नही समझकर अपनी बहन समझना क्योकि मैं बड़ी विपत्तियो को झेलकर इस जगल मे आई हूँ। ऐसा

कहकर ऑखो मे अश्रु बहाती हुई उसने सारी बीती बाते सुनाई और कहने लगी इस वन मे तुम जैसे भाई को पाकर मुझे मन मे कुछ शाति का अनुभव हुआ है। अब तुम भी मुझे सगी बहिन समझकर मेरा साथ दो। ताकि एक-दूसरे के सहयोग से मेरा व तुम्हारा भाग्य खिले और इन दु खो से मुक्ति पाकर अपन सुखद जीवन जी सके। इसलिए आ, आज दोनो भाई-बहिन एक साथ बैठकर भोजन करेगे। ऐसा कहकर अपने हाथ से धन्ना के मुॅह मे ग्रास दिया और फिर दोनो ने साथ बैठकर भोजन किया तथा मोहिनी के तेले का पारणा हुआ।

मोहिनी के इस व्यवहार से तो धन्ना भावविभोर हो गया और बोला— बहिन, आज मुझे ऐसे हर्ष और आनन्द का अनुभव हो रहा है कि मुझे तेरे जैसी बहिन ही क्या मिली मानो जन्मदात्री माता ही मिल गई। मैंने इस जीवन मे अभी तक गालियॉ सहते हुए तिरस्कारमय जीवन ही जीया है। आज पहली बार मॉ की ममता और बहिन-सा प्यार तुमने दिया है तो मैं भी यह वचन देता हूॅ कि मुझ अनपढ को आप जो आज्ञा देगी उसीके अनुसार सारा कार्य करूॅगा। साथ ही प्राण जाने पर भी किसी को कोई बात नहीं बताऊॅगा। बस, बहिन तुम मुझे अपना छोटा भाई अथवा बेटा समझकर अपना लेना, छिटकाना मत। ऐसा कहकर अश्रु बहाता हुआ मोहिनी के चरणो मे झुक

गया। तब मोहिनी ने भी उसको अपनी छाती से चिपकाकर उसकी ऑख के ऑसू पोछे। और फिर बोली–भैया, यह तो मेरे मन मे तुझे पहली बार देखने पर ही अतर् विश्वास हो गया था जो आज यथार्थ रूप मे प्रकट होकर रक्षाबन्धन के रूप मे परिणत हुआ है। इसलिये अब यह मन मे दृढ विश्वास बना लो कि अब हमारे दु ख के दिन हटने वाले हैं और सुख के दिन प्रकट होने वाले हैं। जिसमे कुछ देर हो सकती है पर अधेर नहीं। बस, उसके लिये थोड़ा पुरुषार्थ तो करना ही होगा।

इसीलिए अब हमको सारा कार्य इस ढग से करना होगा कि अपन दो के अलावा तीसरे को कुछ भी ज्ञान न हो। और मैं जैसे कहू और करू वैसे करते जाना और मेरा सहयोग देते जाना। बस, इतनी सी बात का पूरा ध्यान रखने की आवश्यकता है। मोहिनी की इस बात को सुनकर धन्ना अपनी पूर्ण श्रद्धा-आस्था के साथ बोला–बहिन ! मैंने आपको पहले ही वचन दे दिया है और पुन वचन देता हूँ कि यह रहस्य प्राण जाने पर भी किसी के सामने प्रगट नहीं हो सकेगा। बस, मेरे लिए तो अब सिर्फ आपका आदेश-निर्देश है वही सब-कुछ है।

(14)

इस प्रकार धन्ना के वचन सुनकर दृढ आत्मविश्वास के साथ मोहिनी बोली–देख धन्ना, मैं स्त्री हूँ। तू जानता

ही है कि स्त्री का जीवन बडा विचित्र है। थोडी-सी लापरवाही से अनेक सकट घेर सकते है। साथ ही अपने भाई-बहन के रिश्ते मे भी ऐसे साथ रहने से कई लोग कितनी ही तरह की शका पैदा कर सकते हैं। इसलिये अब मैंने आगे की योजना बनाने के लिए पुरुष वेश धारण करने का निर्णय लिया है। और परिचय भी सेठ मोहनलाल के नाम से दूगी और तू भी मुझे सेठ मोहनलालजी के नाम से ही पुकारना। और अतरग रहस्य को कभी प्रगट मत होने देना। तब धन्ना बोला—मैं तो एक बार आपको अपना जीवन सौंप चुका और वचन दे चुका हूँ कि मेरी तरफ से आपकी बात कहीं बाहर नहीं जायेगी। बस, मेरे लिये आपकी आज्ञा ही सब-कुछ है।

अब मोहिनी को धन्ना की बात पर पूर्ण विश्वास हो गया। तब वह उठी और अपने पतिदेव के जो वस्त्र थे उनको ऐसे ढग से धारण किया कि सचमुच मे हूबहू पुरुष ही लगने लगी। साथ ही हावभाव भी कोई चतुर से चतुर व्यक्ति भी यह नही जान सके कि यह पुरुष है या स्त्री। फिर उसने चोरो द्वारा प्राप्त जो जेवरात थे उनको एक-एक करके देखा तो उनमे भी एक दिव्य रत्न निकल गया। उसको व रानी द्वारा मिले दोनो रत्नो को व्यवस्थित करके साथ मे लिया और बाकी सारे सामान को व्यवस्थित करके बाहर से इस ढग से चक्कर लगा कर आई कि धन्ना को भी उस गुप्त स्थान का जरा भी पता नही पडा।

जब मोहिनी पुरुष वेश मे सामने आकर खडी हुई तो एक बार तो धन्ना भी आश्चर्य मे पड़ गया। फिर सारी बात समझ मे आई तब बोला– बहिन, तुमने तो कमाल कर दिया। मैं तो पहचान ही नहीं सका। तब मोहिनी ने कहा–देख धन्ना अब तू मुझे रत्नपुरी का रास्ता थोडी दूर चल कर बता दे और मैं नहीं आऊँ तब तक तू यही रहना और यदि कुछ देर हो जावे तो तू गॉव मे जाकर कल वापस आ जाना। इस बात को सुनते ही धन्ना ने कुछ दूर साथ चलकर रत्नपुरी का रास्ता बता दिया और पुन जगल मे आकर उस स्थान व गायो की देखभाल करता हुआ वृक्ष की छाया मे बैठ गया और इतजार करने लगा अपनी बहिन का।

इधर धन्ना के बताये मार्ग से मोहिनी रत्नपुरी के बाहर पहुँच गई और वहॉ से पूछताछ करके सीधी जौहरी बाजार मे आ गई और निहारने लगी जौहरियो की पेढियो को। जब एक जौहरी की दृष्टि पडी तो उन्होने मुनीमजी को सकेत किया कि देखो, वो कौन है और क्या चाहते हैं ? उनको स्वागत के साथ पेढी पर बुला लाओ। मुनीमजी सेठजी के इशारे को समझकर उठे और पेढी के नीचे उतर कर पास मे आये और बोले–पधारिये पेढी पर और फरमाइये हमारे लायक सेवा कार्य।

तब मोहिनी (सेठ मोहनलाल के रूप में) मुनीमजी

के आग्रह से पेढी पर चढी और बड़े आदर के साथ वहॉ बिछे गादी-तकियों पर बैठ गई। तब जौहरी ने पूछा—आपका कहॉ से किस कार्य हेतु पधारना हुआ है ? साथ ही अपना शुभनाम व परिचय भी बताने का कष्ट करे। तब मोहिनी बोली—मैं कचनपुर निवासी हूॅ। मेरा नाम मोहनलाल है और कुछ जवाहरात बेचने हेतु आया हूॅ। यह कहकर उसने सबसे पहले अपनी जेब से वही चोरो के माल से मिला रत्न निकाला और बोले—पहले तो यह बताइये कि यह कौनसा रत्न है, फिर इसका मूल्य।

जौहरी ने वह रत्न हाथ मे लिया तो आश्चर्य करने लगा और बोला—सेठ साहब यह तो वैडूर्य मणि है और मेरे हिसाब से यह पॉच लाख की है। यदि आप चाहे तो मैं पॉच लाख मैं खरीद सकता हूॅ। जौहरीजी की बात को सुनकर मोहिनी बोली—और सोच कर बोलिये। तब जौहरीजी बोले—पॉच लाख तो मैं दे सकता हूॅ और यदि इससे ज्यादा हो तो आप और इसका परीक्षण कराके निर्णय ले सकते है। जौहरीजी की बात को सुनकर सेठ मोहनलाल (मोहिनी) बोले—आपका कहना यथार्थ है। कष्ट के लिए क्षमा करे। यह कहकर वहॉ से उठकर और चार-पॉच दुकानो पर पहॅुचे। वहॉ भी उसका परीक्षण कराया तो एक जौहरी ने उसको छ लाख मे खरीदने की बात कही। आखिर उसी को बेच दिया। उस छ लाख

की रकम को व्यवस्थित करके बोले--एक बग्घी बुलवाइये। और उसमे बैठकर नगरी के बाहर आये और बग्घी वाले से बोले--क्या भाई यहॉ कोई तुम्हारे ध्यान मे अच्छा स्वतन्त्र मकान इत्यादि हो तो बताओ ताकि उसको किराये पर ले कर रह सकू।

वह बग्घी वाला भी बडा सज्जन था। उसने कहा--सेठ साहब, यहॉ अनेक मकान खाली पडे हैं, चलिये मैं बता सकता हूॅ। उसने साथ चलकर कुछ मकान बताए जिनमे से एक मकान, जो सब तरह से स्वतत्र और उस स्थान से भी नजदीक और सब तरह से सुरक्षित होने से पसद आ गया और किराया तय करके उसकी चाबी ले ली और एक सुरक्षित गुप्त स्थान देखकर उसमे सारी रकम व्यवस्थित करके बग्घी वाले के पास आये और बोले--भैया, आपका परिचय तो बताया ही नहीं।

तब बग्घी वाले ने अपना नाम रामू बताते हुए कहा--मैं भी यही पास की बस्ती मे रहता हूॅ। जब भी आप याद करे, मै सेवा मे तैयार हूॅ। तब सेठ मोहनलाल ने कहा--भैया, बात ऐसी है कि मैं तो यहॉ के लिये बिल्कुल नया हूॅ इसलिए काम तो पडता ही रहेगा। इसलिए बस तुम इतना ही ध्यान रखना कि जब भी तुम शहर मे जाओ तो इधर होके निकल जाना ताकि जब भी काम होगा, बता दूगा। ऐसा कहकर उसको किराये के साथ पॉच

रुपये इनामस्वरूप दिये, जिससे वह बडा खुश हुआ और अब तो प्रतिदिन जब भी शहर मे जाने का काम पडता तो उधर से होकर निकलता।

(15)

इधर सेठ मोहनलाल मकान को पूरा बद करके चाबी साथ लेकर पुन उसी रास्ते से चल कर उसी स्थान पर पहुँचे। इधर धन्ना इतजार कर ही रहा था। ज्योही नजर पड़ी तो वह दौड कर आया और पावो मे पड कर बोला–आपको कोई कष्ट तो नहीं हुआ ? फरमाइये अब मेरे लिए क्या आज्ञा है। उसी समय सेठ मोहनलाल ने कहा–धन्ना, ठहर थोडी देर। मै आवश्यक कार्य से निवृत्त होकर आता हूँ तब तक तू एक बार गायो को सभाल ले। धन्ना जो आज्ञा कहकर गायो को सभालने चला गया और मोहिनी उस गुफा मे गई और सारा सामान एकत्रित करके, बाधकर उस शिलापट्ट पर रख दिया और आवाज लगाई–धन्ना, ओ धन्ना।

धन्ना ने ज्योही आवाज सुनी, दौडकर आया और बोला–फरमाइये क्या हुक्म है। तब बोला–देख, गायो को रवाना करदे ताकि ये धीरे-धीरे आगे बढेगी तब तक अपन आगे चलते है, यह सामान लेकर। धन्ना बोला– गायो की तो कोई चिन्ता नहीं है, ये तो मेरे साथ नहीं होने पर भी सब अपने-अपने घरो मे अपने-आप चली जाती हैं। मैं तो

सिर्फ अपनी जवाबदारी से मुक्त होने हेतु उनको चेताने के लिए जाता हूँ। इसलिए चलिये आप तो और दे दीजिये सामान मुझे।

धन्ना सारा सामान उठाकर सेठ मोहनलाल के साथ चल कर नगर के बाहर आया और उनके पीछे-पीछे उस मकान पर आया और सेठ मोहनलाल ने जेब से चाबी निकाली और मकान का दरवाजा खोलकर दोनो अदर गये और सारा सामान भीतर रखवा दिया। और बोले–धन्ना, अब हमको इसी मकान मे रहना है। इसलिए अब ये गाये वगैरह सब अपने-अपने मालिको को सभला देना और कह देना कि मुझे सेठ मोहनलालजी ने अपने यहॉ काम पर रख लिया है। इसलिये अब मैं उनकी सेवा मे ही रहूगा। इसके अलावा इस मकान आदि की किसी को कुछ भी जानकारी मत देना।

धन्ना ने सारी बात सुनकर कहा कि सेठजी, मैं अभी गायो को सभला कर आ जाता हूँ। यह कहकर मकान आदि का रास्ता ध्यान मे रखकर चला गया और सबको अपनी-अपनी गाये सभलाकर बोला–अब मैं आपकी गाये चराने हेतु नहीं ले जाऊँगा। यह कहकर अपने कपडे व सोने, बिछाने के कपडे लेकर अन्य किसी की कुछ भी बात बिना सुने ही चलकर आ गया और बोला–अब फरमाइये, मेरे लायक सेवाकार्य।

तब सेठ मोहनलाल ने कहा–देख, अभी तो बाजार से एक पानी की मटकी, झाड़ू और किसी ढाबे से अपने दोनो के लिये भोजन सामग्री ले के आजा। यह कहकर उसको पॉच रुपये का नोट पकडा दिया। जिसमे से धन्ना ने एक मटकी, झाड़ू और भोजन खरीद कर बाकी पैसे व्यवस्थित करके, लाके सभला दिये। फिर झाड़ू लेकर सारे मकान की सफाई करके सुरक्षित रख दिये और एक बाहरी कमरा, जिसमे धन्ना के सोने-बैठने की व्यवस्था कर दी और बाकी सब कमरे बद कर दिये। उसके बाद दोनो ने भोजन किया और बाद मे सूर्यास्त के साथ ही धन्ना को सारी भोलावन देकर दरवाजा बद करके सामायिक प्रतिक्रमण किया और थक जाने से सो गई। प्रात. जल्दी उठकर सामायिक प्रतिक्रमण से निवृत्त हुई और धन्ना को कुछ रुपये देकर भोजन सामग्री व आवश्यक सामान की सूची बनाकर बोली–तू जाकर यह सब सामान खरीद कर ले आ।

(16)

धन्ना उस सूची को लेकर सीधा अपने जाने-पहचाने सेठजी की दुकान पर पहुँचा और बोला–सेठ साहब यह सारा सामान, बर्तन आदि जल्दी से जल्दी तैयार कराइये। औ॰ ईमानदारी से इसका मूल्य बता दीजिये और देखिये

कि यदि हमारे सेठजी को आपकी ईमानदारी महसूस हुई तो फिर जो सामग्री चाहिये मैं आपकी दुकान से ले जाऊँगा। यह बात सुनकर सेठजी बोले–धन्ना, तू भी कैसी बात करता है ? इतना समय हो गया, क्या हम पर विश्वास नहीं। धन्ना बोला–सेठजी मुझे तो विश्वास है, लेकिन मेरे सेठजी को तो विश्वास होना चाहिये ना।

तब सेठ बोला–कौन तेरा सेठ ? क्या जिनकी गाये चराता है वो ? यह सुनकर धन्ना बोला–सेठजी, क्या मैं जिदगी-भर गाये ही चराता रहूगा। कल से ही मैंने गाये चराना बद कर दिया और कचनपुर के एक सेठजी, जो यहाँ नये आकर बसे हैं, उन्होने दया करके मुझे अपनी सेवा मे रख लिया है।

इतने मे सेठजी ने सारा सामान तैयार कर दिया। धन्ना ने बिल लिया और रुपया चुकाकर शेष रुपयो को सभालकर सारा सामान एक ठेले गाडी मे भरके लेके आ गया और मकान के भीतर रखकर ठेले वाले को पैसे देकर रवाना किया। फिर सारे सामान व बर्तनो को व्यवस्थित करके, देखकर डिब्बों मे भर दिया और रसोईघर का रसोईघर मे, बाकी सब यथास्थान सेठ मोहनलाल के निर्देशानुसार व्यवस्थित कर दिया। खाली घर भर गया, एक सदगृहस्थ के गृहवास की तरह। उस मकान मे सहज दो विभाग बन गये। भीतरी भाग मे तो मोहिनी ने

अपने लिए सारी व्यवस्था कर दी ताकि दरवाजा बद करते ही अन्दर क्या हो रहा है, कोई नही देख सकता। बाकी भोजन बनाने, खाने की, बैठने-उठने की सारी व्यवस्था बाहर के हिस्से मे धन्ना के जुम्मे कर दी।

धन्ना यो तो दिखने मे भोला लगता पर रसोई आदि कार्यों मे कुशल था और मोहिनी के निर्देशानुसार और कुशल हो गया। बस, अब मोहिनी भीतर बैठी ही सारी निगरानी करती रहती। धन्ना एक खिड़की से खाना पहुॅचा देता और बाहर बैठा सारे कार्य निवृत्त करता हुआ सारे घर की देख-रेख करने लगा। मोहिनी ने भीतर बैठे-बैठे जो जरी, किनारी, रेशम का वस्त्र मगाया था उसके द्वारा कलात्मक कचुकी तैयार की और धन्ना को देकर कहा कि इसको भी उसी तरह आवाज लगता हुआ राजभवन जाना और कहना यह देवी प्रदत्त कचुकी है। उसने वह कचुकी ली और सीधा राजभवन के पास जाकर आवाज लगाई। ज्योही वह आवाज महारानीजी के कान मे पडी, वो झरोखे मे आई और देखा कि यह तो वही लड़का है। तुरन्त दासी को बुलाकर नीचे भेजी। दासी भी महारानीजी की आज्ञा शिरोधार्य करके नीचे गई और उससे कचुकी माग कर ली और महारानीजी को ले जाकर दे दी। ज्योही महारानी ने देखी तो यह विश्वास हो गया कि वास्तव मे यह देवी-प्रदत्त ही है क्योकि ऐसी

कला तो मानव के हाथ की तो हो ही नही सकती। उसी समय खुश होकर अपने रत्नो के खजाने मे से ऑख बद करके यह सकल्प कर डाला कि जो भी हाथ मे आयेगा वो रत्न देवी के नाम पर इसको दे दूगी। और इसी सकल्प के साथ जो भी हाथ मे आया बिना देखे एक कपडे मे बाधकर दासी को दे दिया और बोली–यह देकर उसको बोलना कि यह देवी को भेट चढा देना। और जो-कुछ प्रसाद मिले वह लेके आना। दासी ने जाकर महारानी द्वारा कही बात बताकर उसको कपडे की पोटली पकडा दी।

धन्ना उसको लेकर आया और जैसे के तैसे मोहिनी को पकडा दिया। अब तो मोहिनी की खुशी का पार नही रहा और ऐसी विचित्र-विचित्र चीजे बनाकर धन्ना के साथ भेज देती और धन्ना उनके बदले जो महारानीजी देती वो लाकर मोहिनी को दे देता। ऐसा करते-करते अब मन मे विचार आया कि जिस प्रतिज्ञा की पूर्ति हेतु घर छोडा, पतिदेव का साथ छूटा उस प्रतिज्ञा को पूरा करने का समय आ गया। ऐसा सोचकर उसने मर्दाना भेष धारण किया और अन्दर की सारी व्यवस्था करके ताले लगाये और बाहर आई। सयोग से वह बग्घी वाला भी उधर से निकल गया। ज्योही उस पर दृष्टि पडी तो रोका और धन्ना को सारी भोलावन देकर बग्घी पर चढ गये।

(17)

बग्घी वाला सेठजी को लेकर मध्य बाजार मे आया, जहॉ से सेठ मोहनलाल ने राजा को भेट करने योग्य कुछ बहुमूल्य वस्तुएँ खरीदी और बग्घी मे रखकर कहा—अब मुझे राजभवन लेकर चलो। बग्घी वाले ने अपनी बग्घी राजभवन की ओर मोड ली। बग्घी राजभवन के पास रुकी। सेठ मोहनलाल बग्घी से उतरे और द्वारपाल को कुछ इनाम देकर अन्दर गये और राजसभा के पास जाकर वहॉ के द्वारपाल को उपहार भेट कर कहा कि आप जाकर रत्नपुरी नरेश महिपाल को अर्ज करे कि कचनपुरी के सेठ मोहनलालजी आप से मिलने की उत्कृष्ट अभिलाषा लेकर आये हैं। द्वारपाल ने भीतर जाकर रत्नपुरी नरेश के चरणो मे निवेदन किया तो उन्होने बडी प्रसन्नता से कहा कि उन्हे बडे सम्मान के साथ भीतर ले आओ क्योकि कचनपुर मे रत्नपुरी नरेश का ननिहाल था।

सेठ मोहनलालजी भीतर पहुँचे और रत्नपुरी नरेश महिपाल का अभिवादन कर अपने साथ लाये हुए उपहार भेट करके कुशलक्षेम पूछी। रत्नपुरी नरेश महिपाल ने भी ननिहाल के राज्य आदि की कुशलक्षेम के साथ ही आगमन का कारण पूछा। तब श्री मोहनलाल सेठ ने बडे होश एव जोश के साथ नम्रतापूर्वक निवेदन किया—राजन !

एक विशेष स्वप्न-दर्शन की प्रेरणा के साथ दिव्य शक्ति के प्रभाव से कचनपुरी से पैदल रवाना हुआ और रत्नपुरी के 5 किलोमीटर दूर आकर रुका और जो स्वप्न-दृश्य दिखाकर दिव्य शक्ति ने प्रेरणा दी कि वहीं पर तुझे एक छोटा लेकिन भव्यनगर तेरे माता-पिता के नाम से बनाकर उसमे सर्वजनोपयोगी साधन विद्यालय, औषधशाला, दानशाला, धर्मशाला, देवालय आदि का निर्माण कराकर इस धन का सदुपयोग करके लाभ उठा ले। इससे तेरे धन की सार्थकता हो जाएगी नहीं तो अब कुछ समय बाद ही सारी सम्पत्ति नष्ट होने वाली है। इसलिये चेत जा।

बस, उसी दिव्य शक्ति की प्रेरणा से अब आपकी शरण मे आया हूँ क्योकि वह जगल का स्थान आपकी राज्य-सीमा के अन्तर्गत आता है। इसलिए आपकी आज्ञा लेना नितान्त आवश्यक है। इसलिए आपसे नम्र निवेदन है कि आप मुझे अपनी प्रजा का सदस्य ही समझे और वह नगर भी आपके राज्य के अन्तर्गत ही रहेगा और उसका सारा लाभ भी आपकी जनता को ही प्राप्त होगा। सिर्फ नगर व उसमे बनाये जाने वाले परमार्थ प्रतिष्ठानो पर मेरे माता-पिता का नाम रहेगा।

(18)

रत्नपुरी नरेश महिपाल स्वप्न-दर्शन व दिव्य शक्ति

की प्रेरणा की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। और बोले—यह स्वप्न-दर्शन और दिव्य शक्ति की प्रेरणा तो मेरे राज्य के लिए शुभ-सूचक है। साथ ही मेरी प्रजा के लिए भी हितकर है। तो फिर देर किसकी। मैं सहर्ष आज्ञा प्रदान करता हूँ कि आप जिस नाम से नगर निर्माण करना चाहे और जो परमार्थ सस्थान निर्मित करना चाहे करे। इतना ही नहीं, नगर निर्माण मे सडके, बाग-बगीचे और अन्य सुविधाएँ व मजदूरो की व्यवस्था राज्य की ओर से ही होगी और प्रजा के आवास-निवास की भूमि भी राज्य की ओर से उस नगर मे आकर बसने वालो को मुफ्त मे दी जायेगी। इसलिए आप जितनी लम्बाई-चौड़ाई मे नगर की बसावट करना चाहे और जैसी दिव्य प्रेरणा व स्वप्न-दर्शन के आधार पर उसकी भव्यता बनाना चाहे, बनाएँ। मेरी तरफ से आज्ञा है और सहयोग भी है।

बस, फिर क्या था। राज्य-व्यवस्थानुसार दस्तावेज बनकर तैयार हो गया। नगरी का नाम धनलक्ष्मीनगर के नाम से और रत्नपुरी नरेश महिपाल के मय हस्ताक्षर सौंप दिया। जिसको लेकर सेठ मोहनलाल बडे प्रमुदित भाव से अपने निवास स्थल पर पहुँचे। और शुभ मुहूर्त मे नगरी की नीवँ भी रत्नपुरी नरेश महिपालजी के कर-कमलो से खुदवाकर कार्य प्रारम्भ कर दिया गया।

सबसे पहले उस शिलापट्ट पर बैठ कर महामत्र

के जाप सहित अखड तेला किया। उस स्थान के आस-पास विशाल मैदान पर मजबूत परकोटा खिचवा कर चारो तरफ चार द्वार निर्मित किये गये। उनके मध्य मे एक भव्य महल के निर्माण के साथ ही उस झरने के पानी को सगृहीत करने हेतु विशाल सरोवर, उसके पास ही एक विशाल औषधशाला, फिर विद्यालय और उसके पास विशाल धर्मस्थान, वाचनालय और एक बडी दानशाला के निर्माण की योजना बनी।

साथ ही चारो द्वारो से जुड़ी बड़ी-बडी चार सडके, जिनके आस-पास विभिन्न व्यापारियो के व्यापारिक प्रतिष्ठान एव उस पर ही अनेक आवास, जो एक-एक सडक पर एक ही तरह के निर्मित किये जाएगे। बीच-बीच मे विस्तृत चौक और उनसे निकलने वाली सड़के चारो सडकों को मिला देगी। साथ ही चौक के बीच म सर्कलनुमा चार द्वार वाले बगीचो का निर्माण किया जायेगा जहॉ पर धनलक्ष्मीनगर मार्ग 1, 2 आदि अकित होगे। उनमे उस मार्ग मे बसे घरो की सख्या का भी निर्देश होगा। ऐसा नगर का प्रारूप बन गया।

कार्य तीव्रगति से चलने लगा। कोट के अन्दर के निर्माण के कार्य की देखभाल तो सेठ मोहनलाल धन्ना के सहयोग से करते और बाहरी निर्माण की देख-रेख हेतु राज्य के प्रमुख व्यक्ति नियुक्त कर दिये गये। धन की तो

जब भी कमी महसूस होती तो वे रत्न व आभूषण बेचकर पूर्ति कर देते।

(19)

अब धन्ना उसी जगह पर रात-दिन रहने लगा। सारे निर्माण के साधनो की और कार्य की देख-रेख के साथ मजदूरो पर भी पूरी निगरानी रखते हुए किसको रखना, किसको निकालना व किसको कितनी मजदूरी देना आदि का सारा हिसाब-किताब अपने दिमाग मे ऐसा जमा लेता कि मानो उसके सामने आज के कम्प्यूटर भी फैल हो जाते। भले ही वह अनपढ था, लेकिन उसके कार्य-कलाप से सेठ मोहनलाल (मोहिनी) पूर्ण सतुष्ट था। वह दिन-भर मर्दाना भेष मे रहकर सारा कार्य देखती और घर मे जाकर रात्रि को स्त्री भेष पहनकर रहती और भोजन आदि का सारा कार्य स्वय करती और अपनी प्रतिज्ञा की पूर्ति होते देखकर मन मे प्रसन्नता का अनुभव करती।

पर पतिदेव गणेश के बिछुड जाने से उसकी यादो मे अचानक सिहर उठती और कभी-कभी ऑखो से ऑसू बहा देती। फिर मन मे धैर्य धारण करके चिन्तन करती कि जिसने प्रतिज्ञा की पूर्ति की इस स्टेज तक पहुँचा दिया है तो आशा ही नहीं, पूरा विश्वास है कि एक

दिन बिछुडे पतिदेव का भी जरूर मिलन होगा। इस प्रकार मन को पुन स्थिर करती और कुछ समय महामत्र का स्मरण करती जिससे उसको बहुत बड़ा सबल मिलता।

विकट से विकट परिस्थिति मे भी सामायिक, प्रतिक्रमण आदि धर्म- क्रियाएँ उसने कभी नहीं छोडी क्योकि हृदय मे यह दृढ आस्था जम गई कि सब-कुछ देव, गुरु व धर्म की ही शक्ति है और महामत्र का यह अचिन्त्य प्रभाव है। यह सोचकर सब चिताओ से मुक्त होकर स्वय अपने हाथो से भोजन बनाती। खुद खाती और धन्ना के लिये भी टिफिन तैयार करके साथ लेकर चली जाती। और दिन-भर वहीं बने कार्यालय मे सेठ मोहनलाल के रूप मे बैठकर अन्दर-बाहर की निगरानी रखती।

यदि कोई वस्तु खरीदनी होती तो धन्ना को भेज देती या विशेष प्रसग पर स्वय भी चली जाती। बीच-बीच मे राज्यप्रमुखो, मजदूरो एव कारीगरो से उनके सुख-दु ख की बाते पूछ लेती। सारे कार्यो का जायजा लेकर आवश्यकतानुसार आदेश-निर्देश भी दे देती जिससे सब मजदूर और राज्य- कर्मचारी भी खुश रहते और पूरी तन्मयता से कार्य करते। बीच-बीच मे उनका उल्लास बढाने हेतु कुछ पारितोषिक और नाश्ता, फल आदि का भी वितरण कर देती जिससे सब लोग दिल लगा कर तीव्रगति से कार्य करते थे।

सेठ मोहनलाल की उदारता, आत्मीयता, वचन माधुर्यता से छोटे से बडे, सब व्यक्ति प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। सब यही सोचते और बात करते रहते कि अहो ! इतना बडा सेठ, पर कितनी नम्रता और वचनो मे इतनी माधुर्यता मानो अभिमान तो इनसे कोसो दूर भाग गया हो। कोई कहता धन्यवाद है इनको कि इस भीषण दुष्काल की चपेट मे जनमानस कितना आकुल-व्याकुल हो रहा था। सबके मन मे रात-दिन एक ही प्रश्न नोचता रहता था कि अब कैसे जीवनयापन होगा ? कैसे बाल-बच्चों का पालन करेगे ? कैसे पशुओ की रक्षा होगी ? पर ऐसे मौक पर इन्होने यह कार्य प्रारम्भ करके जो सहयोग दिया है, चाहे मजदूरी के रूप मे ही क्यो न हो, पर आज आराम से जीवन-निर्वाह तो हो रहा है। नहीं तो हम घर-बार छोडकर कहॉ-कहॉ घूमते-भटकते।

साथ ही उदारता, नम्रता भी कितनी, मानो हमारे लिए तो ये भगवान् बनकर ही यहॉ आए हैं। ऐसा सोचकर सब उनके प्रति अपने कृतज्ञ भाव का प्रदर्शन करते और पूर्ण तन्मयता से कार्य करने मे जुटे रहते।

(20)

इधर गणेश व उनकी पत्नी मोहिनी अपनी जेठ-जेठानियो के व्यग्य- बाण एव दुर्व्यवहार से परेशान होकर अर्धरात्रि पश्चात् बिना बताए ही घर का त्याग

करके निकल गये थे। इसलिए रात्रि को तो किसी को कुछ पता नहीं चला। सब अपनी मद-मस्ती मे बिना पैसे के मजदूर गणेश और मोहिनी के भरोसे निश्चितता से सोये हुए थे। न घर की साफ-सफाई की चिता, न पानी भरने की, न खाना पकाने की चिता और न पशुओ को सभालने, न खेती-बाडी की चिता क्योकि सारा कार्य ये दोनो सभाल लेते।

उनको तो नाश्ते के समय नाश्ता, भोजन के समय भोजन तैयार मिल जाता, तब सब उठते और शौचादि से निवृत्त होते। यहाँ तक कि हाथ भी धुलाते तब धोते और फिर जब नाश्ता करते तो भी उसमे पचास नुक्स निकालते कि इसको कुछ बनाना ही नही आता, किसी काम मे साफ-सफाई नहीं है।

लेकिन आज तो सब ही सोये ही रह गये क्योकि कौन आकर जगाये। क्योकि जगाने वाले तो बहुत दूर चले गये थे। नींद तो तब खुली जब पीछे बाडे मे गाये व बछडे आदि रम्भाने लगे। भैंसे और पाडे-पाडी अड्डाने लगे। इधर उठ कर देखा तो न तो घर का कचरा निकला, न पानी भरा, न चूल्हा जला और न दूध-नाश्ता ही तैयार हुआ। तीनो जेठ, तीनो जेठानियाँ यह देखकर बडबडाहट करती सासूजी के पास आई और जोर-जोर से चिल्लाती हुई कहने लगी—सासूजी राज ! यह देखिये

आपके बेटे-बहू का हाल। कल तो इतनी लम्बी-चौडी बाते करने लगी थी और आज सूर्योदय को इतना समय हो गया, फिर भी सब काम यो का यो पडा है।

बिना कमाये मेहनत के सीधा जो घर मे लाकर देते हैं आपके बडे बेटे, फिर भी पकाने और घर के छोटे-बड़े काम करने मे भी इतना जोर आता है। आप खुद ही देखिये। इस प्रकार जोर-जोर से बडबडाहट करते हुए उनके सोने-बैठने के स्थान पर पहुँची, पूरे स्थान को टटोला। उनके कमरे को भी देखा तो ताला बन्द। तीनो हैरान होकर पीछे बाड़े मे गई तो वहाँ भी सारा गोबर पडा हुआ था। गाये-भैंसे दूध निकालने और घास-बाटे व पानी का इतजार कर रही थी। पर वे दोनो नही दिखे।

आखिर वो हडबडाती हुई पुन सासूजी के पास पहुँची। सासूजी क्या बात है, सब जगह ढूढ कर आ गई लेकिन गणेशजी व उनकी पत्नी दोनो ही नहीं दिख रहे हैं। क्या आपको कुछ कह कर गये है ? यह बात सुनते ही सास लक्ष्मी हतप्रभ हो उठी और नयनो से नीर बहाती हुई बोली—क्या कहती हो ? क्या वो दोनो नही दिखे ? ओहो तब तो गजब हो गया। मेरा मन कहता है—हो-न-हो, कल के तुम्हारे वचनो के तीरो से मोहिनी बडी व्यथित लग रही थी। शायद उसका मन भी उचटा-उचटा तो

लग रहा था। हो-न-हो कहीं उन्होने आत्महत्या तो नहीं करली है ? क्योकि वचनो की मार ऐसी ही होती है। एक कहावत भी है कि 'तलवार के घाव तो फिर भी शीघ्र भर जाते हैं पर वचन के घाव नहीं भरते।

हाय ! अब मैं क्या करूगी। मेरे बुढापे मे धूल पड गई। हाय ! वे दोनो कहाॅ गये ? अब मैं क्या करू ? मैंने कई बार अनुभव किया कि इस घर मे तुमने कभी अपने छोटे देवर-देवरानी की तरह तो दूर एक नौकर-नौकरानी जितनी भी इज्जत नहीं रखी। हर समय तुम्हारे सिर पर तो धन का नशा चढा रहता। वे दोनो इतना-सारा घर का काम करते। हम दोनो के साथ तुम्हारी सबकी कितनी सेवा करते, पर तुम तो उन पर वचनो के वार करते नही चूकती। अपने देवर-देवरानी की हैसियत से कभी उनकी तुमने इज्जत भी नहीं की। कभी यह नहीं सोचा कि न मालूम किसके भाग्य से हम सुख से जी रहे है, खा-पी रहे हैं। लेकिन किसको कहे ? कौन सुनने वाला ? आखिर वो भी इस घर के सदस्य थे और हिस्से के हकदार भी। धन ही सब-कुछ नहीं होता। उसका क्या अभिमान करना ? आज है कल चला भी जा सकता है। बडे-बडे राजा -महाराजाओ को भी देख रहे हैं।

वो तो इस घर के हकदार थे। तुम्हारे पति दुकान पर बैठे बिना पसीना बहाये कमाते पर तुम तो

महलो में बैठी-बैठी केवल उन पर रौब ही जमाती और हुक्म ही चलाती और मारती रहती ताने। फिर भी वे बिचारे चुपचाप तुम्हारी कितनी इज्जत करते और हमारी कितनी सेवा करते। गणेश खेतो मे मजदूर की तरह और मोहिनी मजदूरनी की तरह तुम्हारी सेवा करती। उसके बदले तुम उनको क्या देती ? विषभरे वचन और मर्मभरे ताने। मुझे लगता है, कल तो तुमने हद ही कर दी। आखिर सहन करने की भी हद होती है। वे दोनो परेशानी के मारे यहॉ से निकल गये पर कही कुछ कर बैठे तो हम दुनिया मे मुँह दिखाने लायक नहीं रहेगे। क्या जवाब देगे सगे-सम्बन्धियो, गाँव और समाज को। ऐसा कहते-कहते सास लक्ष्मीबाई जोर-जोर से रोने लगी।

ससुर धनपत को भी जब यह बात मालूम पडी तो वह बेचारा सारी बात सुनकर भारी गमगीन हो गया। और कहने लगा—चलो, गणेश की मॉ अपन भी इस घर से निकल जाते हैं। इनको यहॉ आराम से रहने दो। लेकिन तीनो बहुएँ आडी फिर गई और अपने अपराध की क्षमा मागते हुए कहने लगी—आपको हम कहीं नही जाने देगी। साथ ही देवरजी व देवरानीजी की भी खोज करायेगी। ऐसा मन मे कोई विचार न लाये। हम आपकी पूरी सेवा करेगी। ऐसा कहकर बडी मुश्किल से रोका दोनो को।

(21)

इधर धीरे-धीरे यह बात सारे मौहल्ले मे फैल गई। जिसने भी सुना सब आश्चर्य करते हुए हवेली मे कोई धनपत सेठ के पास तो कोई लक्ष्मी सेठानी के पास बैठकर एव कुछ लोग बाहर ही बैठकर तरह-तरह की बाते करने लगे। कोई कहने लगा—भाई, गणेश चाहे दिखने मे सीधा-सादा, कम पढा-लिखा था और भले व्यापार करना नही आता, पर था पुण्यवान। हमने देखा, उसके जन्म के पहले सेठ धनपत के यहाँ रोटियो के लाले पडते थे। लेकिन उसके जन्म लेने के बाद ही यह घर ऊँचा आया है। यह हवेली, यह पेढी सब उसके बाद ही बने हैं।

साथ ही उसकी पत्नी भी भले साधारण परिवार की हो, चाहे इन बडी बहुओ की तरह पीहर से धन न लाई हो, पर थी बडी सुशील, मेहनती और विनयवान और कैसी लज्जावान थी। सारे घर का काम अकेली सभालती। इतना ही नहीं, आस-पड़ौस वालो की सेवा भी करने हेतु तत्पर रहती। हालाकि इन बडी बहुओ का उसके साथ इतना नीच से नीच व्यवहार, जितना गये-गुजरे नौकर के साथ भी नही होता, वैसे करते देखकर हमे भी दया आ जाती। पर उसने किसी के सामने कभी कोई बात नहीं

की। उल्टा कोई कह देते तो यही कहती, बडो की सेवा कहाँ है पडी है ? जिनकी पुण्यवानी होती है उन्हीं को बडो की सेवा का सौभाग्य प्राप्त होता है। उसको कभी मुँह चढाते, रोते नही देखा। हमेशा उसके चेहरे पर मुस्कान बिखरी रहती थी।

इधर ये बडी बहुएँ जो अपने-आप को बडे बाप बेटी मान कर घमंड मे ही फूली रहती हैं, आज इतना अरसा (समय) हो गया। इस घर और मौहल्ले मे आए, पर कभी इनको बडो-बुड्ढो की इज्जत करते नहीं देखा, न किसी से प्रेम से बोलते, न सुख-दु ख मे आत्मीयता दिखाते देखा। हो-न-हो इनकी परेशानी से ही वे दोनो घर से चले गये।

एक बहिन बोलने लगी—देखो, भई मुझे तो ऐसा लग रहा है कि उन पुण्यवान आत्माओ के घर से निकलने के बाद घर की पुण्यवानी भी निकल गई। लेकिन विचार तो इन सेठ-सेठानीजी का आता है। आखिर माँ-बाप के लिए ज्यादा कमाऊ, चाहे कम कमाऊ, सब समान हैं और इनकी तो सेवा करने वाले भी वही थे। ये तीनो बेटे और बहुएँ तो रात-दिन अपने अहभाव में डूबे रहते थे। कभी इनके पास बैठकर सेवा करते भी नही देखा। अब उनके जाने से इनकी हालत खस्ता हो जाएगी। ऐसा सोचकर कई लोग सात्वना देते हुए कहते—आप उनकी चिन्ता मत

कीजिए, वे आपको छोड़ कर नही जा सकते।

हो सकता है अधिक परेशान होने से मन उचट गया हो और दोनो यहाँ से रवाना हो कर कहीं ननिहाल या गणेश के ससुराल चले गये हो। इसलिये थोडे दिन रह कर मन का आवेग ठडा होने पर वापस आ जायेगे। आप निश्चित रहे। हम भी चारो तरफ उनकी खोज करके समाचार लेगे। ऐसा कहकर सब अपने-अपने घर मे चले गये। लेकिन यह चर्चा तो धीरे-धीरे शहर मे फैलने लग गई। क्या दुकान, क्या घर, क्या बाजार, जिससे तीनो बहुओ का हाल बेहाल था ही, इससे भी अधिक बेहाल भाइयो का था। जो भी आता यही चर्चा करता। इस कारण से दुकान पर बैठना भारी हो गया। वे सबको यही उत्तर देते—क्या करे, औरतो की बातो मे आ गया। खैर, सब तरफ खोज कर रहे है। देखे, क्या होता है। ऐसे सबको शात करके रवाना करते।

(22)

इसी उधेडबुन से घर का सारा काम बिखरा पडा था। पानी के बर्तन देखो तो खाली पडे हैं। आटा भी पीसा हुआ नहीं है और न ही पशुओ को चारा-पानी। आखिर अब अन्य कुछ उपचार नहीं था। विवश होकर तीनो पानी लाने निकली। पानी कैसे लाया जाता है ?

उसमे कितना जोर लगता है ? आज उनको मालूम पडा। साथ ही आज तीनो बहुओ को पनघट पर देखकर सारी औरतें ताने मारने लगी और आपस मे बाते करने लगी—देखो बेचारी गणेशजी की बहू को, सारे घर का कितना काम करती तो भी बिचारो को ताने मार-मार कर इतना दु खित कर दिया कि बिचारो को घर छोडकर निकलना पडा। अब मालूम पडेगा कैसे काम करना होता है ? इतने दिन देवरानी के भरोसे खूब मौज उडा ली।

बेचारी तीनो बहुओ को काटो तो खून नहीं। पर विवश थी। जैसे-तैसे पानी भरने के बाद फिर गायो-भैसो का गोबर साफ करना पडा। फिर गाय-भैंस का दूध निकाला तो आधा भी नही निकाल पाई। आटा भी पीसना पडा। और जैसे-तैसे भोजन बनाकर सबको भोजन कराया। पर हालत ऐसी खराब हो गई कि दो को तो बुखार ही आ गया। अब तो सारा काम बडी वाली के ऊपर आ गया। वह भी एक-दो दिन मे ही पूरी तग आ गई। अब तो तीनो ही यह सोचने लगी कि मैं कम से कम काम करू। इसलिए सब काम से जी चुराने लगी जिससे छोटी-छोटी बाते मे परस्पर झगडा होने लग गया। आखिर सबने एक ही निश्चय किया कि सब अपनी-अपनी रसोई अलग बनाने लग जाए, जिससे घर का खर्च भी तिगुणा हो गया।

इधर वृद्ध माता-पिता की हालत भी खराब हो गई। तीनो अपने-अपने बाल-बच्चो की व्यवस्था करने मे ही इतनी परेशान हो जाती कि सेठ-सेठानी की कौन चिन्ता करे। सब एक-दूसरे के भरोसे रह जाते कि उसने खाना भेज दिया होगा, उसने भेज दिया होगा। ऐसी परिस्थिति मे जैसे-तैसे भूखे-प्यासे रहकर पॉच-सात दिन निकाले। आखिर सेठ-सेठानी दोनो ने भी अलग रसोई बनाना चालू किया जिससे लोगो मे तरह-तरह की चर्चा होने लगी। पेढी की जो प्रतिष्ठा थी वह भी धीरे-धीरे कम होने लगी। जिसका प्रभाव व्यापार पर भी पडा। जहॉ पहले ग्राहको की भीड उमडती थी वहॉ अब उसके लाले पडने लग गए। बडी मुश्किल से एक-दो ग्राहक दिन-भर मे आते तो उन्हीं से खर्च निकल सके, ऐसा कस निकालने लगे जिससे हुआ यह कि सारा व्यापार ठप्प पड गया।

इधर जिनकी पूजी जमा थी वे भी आकर मागने लगे जिससे पेढी की इज्जत भी खतरे मे पड गई। पेढी की प्रतिष्ठा रखने हेतु उल्टा-सुल्टा कार्य करने लगे। एक दिन कुछ चोर चोरी का माल बेचने आए तो लोभ मे आकर खरीद लिया। लेकिन वह माल राजघराने का था। इधर गुप्तचरो ने जाकर राजा को सारी बात बता दी। ज्योही राजा ने गुप्तचरो से यह बात जानी, उन्होने उसी समय राज्य-कर्मचारियों को भेजकर उनको महल में बुलाया

और सारी पूछताछ करने लगे। लेकिन जब उन तीनो भाइयो ने बिल्कुल इनकार कर दिया तब राजा ने कुपित होकर राज्य-कर्मचारियो को भेजकर सारी हवेली और दुकान की तलाशी लेकर जेवर प्राप्त किये। फिर हवेली को सील करके राज आज्ञा सुना दी कि कल सूर्यास्त के पहले-पहले इस राज्य की सीमा को छोड़ दे।

यह बात तुरन्त ही सारे मौहल्ले मे फैल गई। सब लोग हवेली के आस-पास मे एकत्रित हो गये। सारे परिवार मे तहलका मच गया। सब किंकर्तव्यविमूढ हो गये। सोचने लगे—अब क्या करे ? कहाँ जाये ? निकट सम्बन्धियों ने राजा से सिफारिश की लेकिन कुछ जोर नहीं चला। आखिर रोते-बिलखते ज्यो-के-त्यो हवेली से बाहर निकलना पड़ा। जिसने भी सुना सब थू-थू करने लगे। सबके मुँह से एक ही आवाज निकल रही थी—देखो गणेश और उसकी पत्नी मोहिनी, भले पढे-लिखे और इतने होशियार न थे लेकिन थे नीतिवान, परिश्रमी और पुण्यवान। जब तक वे घर मे थे, इस घर का कितना गौरव वढा। चारो तरफ इस परिवार की कितनी यश-कीर्ति फैली।

आज प्रत्यक्ष देख लो। उनके जाते ही इस परिवार की कैसी दुर्दशा हो गई। सारी इज्जत पानी मे मिल गई। कर्म की दशा कैसी विचित्र है। व्यक्ति सत्ता-सम्पत्ति के

मद मे बेभान होकर कर्म-बन्धन के समय तो कुछ नहीं सोचता। हॅस-हॅस कर बाध लेता है, फिर वे कर्म जब उदय मे आते हैं तब कितना बुरा फल देते हैं। क्षणमात्र मे राजा से रक बनने मे देर नहीं लगती। देखो बेचारे धनपत सेठ व सेठानी लक्ष्मी को। इस वृद्धावस्था में आज जीते-जी घर बार छोडना पड रहा है। अब कहॉ जायेगे ? कहॉ रहेगे ? कहॉ भटकेगे ? इस प्रकार जितने मुॅह उतनी बाते। कोई हमदर्दी दिखा रहा था तो कोई व्यग्यात्मक कटु वचनो के तीर छोड़ रहा था।

कोई कहता—देखो, हाथो-हाथ इनको अपनी करनी का फल मिल गया। बेचारा गणेश और उसकी पत्नी मोहिनी रात-दिन इनकी कितनी सेवा करते और सबको शान्ति पहुॅचाते। न कभी किसी से झगडा, न कभी किसी से वैर-विरोध। अपने काम मे ही मस्त रहते। अरे घरवालो की ही क्या, सारे मौहल्ले वाले, पास-पडोसियो का भी कितना ध्यान रखते। छोटे-बडे सबकी इज्जत करते। लेकिन ये धन के मद मे पागल बनकर उनकी कुछ भी इज्जत नहीं करते। और तो और, उनका खाना-पीना भी पसन्द नहीं आता। कभी अच्छा खा लेते, पहन लेते तो इनको फूटी ऑख नहीं सुहाता।

हर समय उन पर ताने कसते रहते। आखिर व्यक्ति सहन करके भी कितना करे ? रात-दिन, सोते,

उठते, बैठते इनके वचनो के तीरो को सहन करते-करते हैरान हो गये और विवश होकर रात्रि को ही घर छोडकर जाना पड़ा। अब न मालूम दोनो कहॉ भटक रहे होगे ? बेचारो की क्या दशा हो रही होगी ?

कोई बोला—अरे भाई प्रत्यक्ष देख लो। उन सरलात्माओ को इस प्रकार तग करके घर से निकाला तो आज इनकी भी कैसी दशा हो गई। सारे परिवार को आज कैसे छोडकर निकलना पड रहा है। अब ये कहॉ भटकेगे ? कहॉ इनको आसरा मिलेगा ? कुछ पता नहीं। नगरी का राजा पूर्ण रूप से कुपित हो गया है। अब यदि आस-पास के गॉवो, नगरो मे भी खबर भेज दी तो क्या हाल होगा ? कौन नगरी में घुसने देगा ? कहॉ मजदूरी मिल पायेगी ?

कई भाई बोलते—अरे भाई, इसीलिए ज्ञानीजनो का कथन है कि भोले-भद्रिक प्राणियो को कभी मत सताओ। उनके सरल हृदय मे ही परमात्मा का निवास होता है।

(23)

इस प्रकार चारो तरफ लोगो की भीड एकत्रित होकर तरह-तरह की बाते कर रही थी, कौन किसको रोक सकता था। धनपत सेठ व परिवार वाले इन सब

कटु आलोचनाओ को सुन चुप रहते। इसके अलावा अन्य कोई उपचार भी तो नही था। हॉ, इतना जरूर था कि लोगो की इन सत्य तथ्य मूल बातो को श्रवण करके आत्मग्लानि तो जरूर हो रही थी कि वास्तव मे हमारे कुकर्मों ने ही हमको आज इस दशा पर पहुँचाया है।

वास्तव मे हमने पुण्यशाली भाई गणेश व उसकी पत्नी मोहिनी के साथ अत्याचार करने व कष्ट देने मे कुछ भी कमी नहीं रखी। वे तो विचारे दिल खोल कर तन-मन से सेवा करते। साथ ही हमारा कितना आदर करते और सारे परिवार की कितनी सार सभाल करते। फिर भी हमने उनका तिरस्कार ही किया। उसीका यह फल हमको कुछ ही समय मे मिल गया।

लेकिन अब क्या हो सकता है ? जो गलती हो गई वह तो हो गई। इस प्रकार पश्चात्ताप करते हुए अपने कुकृत्यो का हार्दिक पश्चात्ताप करने लगे और ऑसू बहाने लगे। जिसे देखकर आस-पड़ौसियो के भी अश्रु प्रवाहित होने लग गये। उन्होने पुन राजा के चरणो मे फरियाद करने का चिन्तन भी किया लेकिन राजा धर्मपाल की अनैतिकता पर कठोर दडनीति का चिन्तन करके मन थर्रा उठा। क्योकि वे ऐसे व्यक्तियो की सिफारिश करने वालो को भी कठोर दण्ड देते हैं। यह सोचकर चुप रहने मे ही अपनी खैरियत समझने लगे। हॉ, इस घटना से

बहुत-से व्यक्ति अपने-आप से सावधान जरूर हो गये। यह सोचकर कि कहीं थोडी-सी असावधानी हो गई व्यापारिक लेन-देन मे, तो हमारी भी यही दशा न हो जाय। साथ मे देखा कि कुछ गुप्तचर इस बात की खोज मे भी लगे हुए थे कि इस अनैतिक कार्य मे कौन किस प्रकार सहयोग दे रहे हैं। ऐसा सोचकर सब ऊपरी सहानुभूति दिखाते हुए अपने-अपने घरो की ओर जाने लगे।

जब श्रेष्ठी धनपत ने देखा कि निकट से निकट सम्बन्धी भी अपना-अपना मुँह लेकर जा रहे हैं तो अब हमारा यहाँ कौन सहायक हो सकता है। तब सबको एक तरफ लेकर समझाया—देखो, मैंने तुम सबको समय-समय पर खूब सावधानी दिलाई कि तुम अपने छोटे भाई से प्रेम रखो—वह भले पढा-लिखा कम है, पर है पुण्यवान। साथ में उसकी पत्नी भी भले साधारण परिवार की है, पर है सेवाभाविनी, पुण्यशालिनी, सरल स्वभाविनी। क्या तुमने लोगो के मुँह से नहीं सुना ? और बचपन मे खुद ने नहीं देखा, हमारी क्या हालत थी ? कैसे मेहनत-मजदूरी करके तुम्हारा पोषण करता था। जब से इसका जन्म हुआ तब से हमारा सुख-वैभव बढता ही गया और बहू मोहिनी के घर आने के बाद तो हमारे घर की प्रतिष्ठा मे चार चाद ही लग गये। पर तुम सबने उनकी उपेक्षा ही

क्षमायाचना करके दोष की शुद्धि करते हुए आगे से ऐसी प्रवृत्ति से बचने हेतु सजग बन जाता है।

बडी प्रसन्नता की बात है कि तुमको इस विपत्ति ने सजग कर दिया जिससे तुम अपनी गलती का एहसास करके पश्चात्ताप के अश्रु बहा रहे हो। बस, अब जो-कुछ हुआ उसको भूलकर दृढ सकल्प के साथ मे अब आगे बढ जाना ठीक है। अभी छाया लग्न भी श्रेष्ठ है क्योकि आज गुरुवार है और मेरी छाया 7 पाव की इस समय पड रही है। यह लग्न सब दोषो से रहित होता है। क्योकि बताया गया है कि शनि, शुक्र, सोम साढे आठ पाव, बुध आठ, गुरु सात, शनि ग्यारह पाव छाया सीधे रहकर अपने पावो से गिनकर देखे और शुभ कार्य के लिये प्रस्थान कर ले तो कोई ग्रह, नक्षत्र, तिथि बाधक नहीं बन सकते और हर शुभ कार्य लाभप्रद बनता है।

इसलिये अब देर करना उचित नहीं। सब महामत्र का स्मरण करो और चल पडो। इस प्रकार पिताश्री की आज्ञा होते ही सबने तैयारी की और माता-पिता, बाल-बच्चो सहित सब की ममता मार कर निकल पडे। अपनी हवेली, दुकान, नगरी आदि जीते-जी त्याग कर जाना उनके लिए भारी पड रहा था। सबकी ऑखो मे अश्रु प्रवाहित होने लगे पर कौन सात्वना देने आगे आवे। सारा ससार ही स्वार्थ से भरा है। स्वार्थ की पूर्ति तक तो सब साथ

देने हेतु तत्पर हो सकते हैं पर विपत्ति मे कौन सहयोग दे। बिचारे सब टुकर-टुकर अपनी हवेली, दुकान को देखते-देखते आगे बढे और नगरी बाहर निकले और चल पड़े दक्षिण दिशा मे, जो राह मिली उस पर।

सिर्फ राज आज्ञा से सोने, बिछाने व पहनने के साधन, भोजन आदि बनाने के साधन और एक बैलगाडी और कुछ आटा, दाल आदि लेकर आगे बढने लगे। और चलते-चलते उसी गॉव मे आये जहॉ पर गणेश व मोहिनी ने विश्राम किया था। उसी बुढिया के चबूतरे के पास गाडी रोकी और चबूतरे पर सामान रखकर उस दिन तो जो थोडा-बहुत बना हुआ भोजन लेकर आए थे उसको खाया और फिर सब परस्पर आगे की योजना बनाने लगे और बातचीत मे कहने लगे कि अब गणेश और बहू मोहिनी की कैसे खबर लगे। वे किस दिशा मे घर से निकल कर गये उसी दिशा मे हम भी बढे ताकि कहीं-न-कहीं वे मिल जावें।

ये बाते अन्दर बैठी बुढिया ने सुनी और बाहर आकर देखने लगी। जब परिचय जाना तो मालूम पडा कि यह उन्हीं का परिवार है और अभी-अभी राजा ने जिनका सब-कुछ जब्त करके अपनी नगरी से निकाला, वे यही हैं। ऐसा सोचकर वह बोली--देखिये, राज-आज्ञा के विरुद्ध विशेष तो मैं कुछ नहीं कर सकती। पर इतना

जरूर बता देती हूँ कि गणेश और उसकी पत्नी मोहिनी इधर ही आए थे और यहाँ दो-तीन रात मैने उनको रखा भी था। और तो और, जिन्दगी-भर उनको मेरे यहाँ रखने का सोचा भी था क्योकि मेरे यहाँ पास मे सेवा करने वाला कोई नही है। पुत्र व परिवार दिशावर रहते है। पर वो रुके नही थे। रात को बातचीत करते लोगो ने उनको रास्ता भी बताया था कि इस रास्ते से जाने पर आगे रत्नपुरी नगरी आती है। यह सुनकर उन्होने उसी राह पर कदम बढाये थे।

सेठ धनपत आदि ने जब यह बात सुनी तो सोचने लगे–शगुन तो श्रेष्ठ हुए है। कम से कम एक अदाज तो लग गया। इसलिये अब उसी दिशा मे बढना हितकर है। इसलिए अन्य सब बाते गौण करके बोले–माजी आपका भला हो कि हमारे पुत्र व पुत्रवधू के बारे मे आपने जानकारी दी। अब हम उनकी खोज मे घर-बार सब छोडकर निकले हैं। ऐसा कहकर उस समय तो सब सो गये। प्रात उठकर जाने की तैयारी करने लगे। तब बुढिया ने कुछ भोजन सामग्री पकडा दी और बोली–मेरी शुभकामना है कि वे दोनो आपको शीघ्र मिल जावे। मेरी तरफ से भी उनको बहुत-बहुत याद करना क्योकि उन्होने दो-तीन दिन मे मेरी ऐसी सेवा की कि आज भी हर समय याद आती रहती है।

बुढिया की यह आत्मीयता व गणेश और बहू मोहिनी की प्रशसा सुनकर सब गद्‌गद हो गये और गाडी मे सब सामान रखकर बुढिया को बोले–माजी आपकी कृपा और आशीर्वाद से वे दोनो जल्दी मिले, इसी आशा के साथ अब हम चलते हैं। हमारे कारण कोई तकलीफ हुई हो तो क्षमा करे। ऐसा कहकर आगे बढ गये।

(25)

कुछ दूर जाने के बाद सेठ धनपत बोला–देखो, यदि दु ख के दिन भी सुखमय बनाना हो तो हमको पूर्व के भोगे हुए सुखोपभोग के साधनो को ऐसे भूल जाना है जैसे हमारे पास थे ही नहीं। मानो उस जीवन से मरकर हमने नया जीवन प्राप्त किया है। फिर इस जीवन को कैसे सुख से जी सके, इसका चिन्तन करते हुए जिस भी तरह से, जो भी कार्य करना पडे सबको उसके लिए तत्पर रहना होगा। इसलिये मेरा सबको एक ही कहना है कि रास्त में लकडी, कडे अथवा अन्य लौह-लक्कड, घास जो भी मिले उसको गाडी मे भरते चलो। ताकि हमारे रसोई मे और बैलो के जो काम आएगा, आ जायेगा बाकी मौका देखकर बेच देगे जिससे कुछ पैसा प्राप्त हो जायेगा। सबको सेठ धनपत की बात अच्छी लगी और उतर गये गाड़ी से। और इकट्ठे करने लगे रास्ते मे मिलने वाली

दूर से आये हैं, यदि कोई मजदूरी मिल सकती हो तो बताओ ताकि परिवार का गुजारा चल सके।

तब उन्होने बताया–भाई साहब, यहाँ से छ किलोमीटर दूर एक नया नगर बस रहा है। यदि वहाँ पर चले जाओ तो आपको अच्छी मजदूरी मिल सकती है। उस नगर का निर्माण करने वाले सेठ मोहनलाल बडे उदार हैं। उनके मुँह से यह बात सुनते ही जल्दी से अपना सारा सामान गाडे मे रखा और रास्ते की जानकारी करके वहाँ पहुँच गये। लेकिन वहाँ से तो समय होते ही मजदूर और देख-रेख करने वाले सब अपने-अपने गाँवो मे चले गये थे। जो सुदूर बाहर के मजदूर थे वे वहीं बनी घास-फूस की झौंपडियो मे अपने-अपने परिवार के साथ भोजन बनाने मे जुटे हुए थे।

नये व्यक्तियो को देख कर धन्ना उनके पास मे आया और उनका परिचय पूछा। तब सेठ धनपत ने अपना कुछ परिचय बताकर मजदूरी की बात कही। धन्ना ने सारी बात सुनी और कहा–देखिये अभी तो आप यहाँ विश्राम कीजिये। फिर कल सबेरे सेठजी के आते ही इसके बारे मे विचार-विमर्श करके सारी बात बता दूगा। बस, आप विश्वास रखिये। सेठजी बड़े उदार है। आपको अच्छी से अच्छी मजदूरी अपनी-अपनी योग्यतानुसार दिलाने की पूरी कोशिश करूगा।

धन्ना के इस मधुर व्यवहार से सबको बडी शाति मिली। सब वहीं वृक्ष की छाया मे गाड़ा खडा करके सामान व्यवस्थित करके बैठ गये और जो-कुछ साथ मे था वह खा-पी कर सो गये। और प्रात महामत्र का स्मरण करके, शौचादि से निवृत्त होकर इतजार करने लगे सेठजी के आगमन का।

(26)

इतने मे देखते ही देखते एक बग्घी अन्दर के परकोटे के बाहर खडी हुई और ज्योही उसमे से सेठ मोहनलाल उतरे तो सब मजदूरो, कर्मचारियो के साथ धन्ना ने भी अभिवादन किया और सेठ धनपत और उनके परिवार से बोला–ये पधार गये हमारे सेठजी। यह सुनते ही उन्होने भी हाथ जोडकर उनका अभिवादन किया। तब सबका अभिवादन स्वीकार करते हुए उनकी दृष्टि सेठ धनपत व उसके परिवार पर पडी तो पहचानते देरी नही लगी और आश्चर्य भी हुआ कि ये यहॉ इस दशा मे कैसे पहुँच गये ? फिर भी ऊपर से अपरिचित बनकर एक दृष्टि डालकर सबका परिचय पूछा। सेठ धनपत अपनी दीन-हीन दशा बताकर गिडगिडाते हुए बोला–बस, अब हम बडी आशा लगाकर आपकी शरण मे आये हैं। कुछ मजदूरी मिल जाये तो सबके पेटपूर्ति का साधन मिल

सके। सेठ धनपत की इस दशा को देखकर मन एकदम दयार्द्र हो गया और ऑखो के माध्यम से बाहर प्रवाहित होने वाला ही था कि उसने अपने मन को नियत्रित करके रोक दिया और रहस्य को गुप्त रखकर धन्ना को साथ लेकर अदर चले गये।

फिर धन्ना को बोले, देख धन्ना, बेचारे बहुत दयनीय परिस्थिति मे इतनी दूर से यहॉ आये हैं तो कुछ शहर के मजदूरो को कम करके इनको रखना उचित लगता है। क्योकि ये रात-दिन यहीं रहकर काम सभाल सकते हैं। इन तीनों को सबके ऊपर देख-रेख के साथ हिसाब सभालने के लिये नियुक्त कर दो। जो तीनो जवान औरते हैं उनको ईंट पत्थर ढोने हेतु लगा दो। और जो बडे-बूढे हैं उनको व बच्चो को कह दो कि आपसे जितना हो सके इनका सहयोग करो और बाल-बच्चों की देखभाल करो। साथ मे रहने के लिये जो बडा टीन सेड का मकान, जिसमे अलग-अलग सोने की व्यवस्था है, वह उनको बता दो ताकि वहॉ सब कार्य निपट सके। साथ ही भण्डार में से व्यक्तिश राशन की फ्री व्यवस्था व सोने-बैठने के साधन और पहनने हेतु वस्त्र के साथ आवश्यकतानुसार बर्तन आदि की व्यवस्था कर दो ताकि इनको किसी प्रकार का कष्ट न हो।

साथ ही पुरुषो को दिन के बीस और स्त्रियो को

दिन के दस रुपये के हिसाब से आठों व्यक्तियो की मजदूरी तय कर दो। सेठ मोहनलाल की बात सुनकर धन्ना उनके पास पहुँचा और सारी बात समझा दी और मकान बताकर भण्डार से सारी आवश्यक वस्तुएँ दे दी। जिससे सब हर्षविभोर हो गए और सब धन्ना के निर्देशानुसार अपने-अपने कार्य मे लग गये।

दिन-भर कार्य करने के बाद शाम को पॉच बजते ही सबको कार्य से छुट्टी दे दी गई। सब बाहर से आने वाले तो अपने-अपने घरो की दिशा मे रवाना हो गये। लेकिन वहीं स्थायी रहने वाले अपने-अपने झोपडो मे चले गये। सेठ धनपत व उनकी पत्नी लक्ष्मी ने दिन-भर घर की देखरेख के साथ भोजन आदि तैयार करके बाल-बच्चो को खिला दिया और तीन पुत्र व बहुओ के घर पर आते ही बडे प्रेम से भोजन परोसा। आज तीनो भाइयो और तीनो देवरानी-जेठानियो ने बडे स्नेहपूर्वक साथ-साथ बैठकर भोजन किया, कड़ी मेहनत और तीव्र भूख होने से भोजन का स्वाद ही कुछ अनूठा लगने लगा। सबको आज बड़ी शाति का अनुभव होने लगा। भोजन-निवृत्ति के साथ ही कुछ देर परस्पर सब बातचीत करने बैठ गये।

इधर धन्ना भी भोजन आदि से निवृत्त हुआ उन्हीं के पास आकर बैठ गया। आज उसको भी कुछ शाति का अनुभव हुआ क्योकि इतने दिन वहॉ वह अकेला ही रहता

था। छुट्टी होते ही बाहर के मजदूर आदि तो सब चले जाते और यहाँ रहने वाले कुछ दूर अपने झोपडो मे चले जाते। धन्ना वहाँ आया और पूछने लगा—बोलिये, और तो आपको कुछ तकलीफ नही है ? सब बराबर व्यवस्थित जम गया ? यदि और कोई तकलीफ हो तो किसी बात का बिना सकोच किये बता देना।

धन्ना की इस बात को सुनकर तो सब गद्‌गद हो गये और कहने लगे—भाई साहब, आज आपकी कृपा से ही कभी सोच भी नहीं सकते उतना सुख व आराम मिल रहा है। नहीं तो आज हम कितने दिनो से भाग्य रूठने से दर-दर की ठोकर खा रहे हैं। क्या बताये, भाग्य जब रूठ जाता है तो राजा को रक बनते देरी नही लगती। आज वही दशा हमारी हो रही है। भाग्य की अनुकूलता मे व्यक्ति अपने अह मे किसी को कुछ नहीं गिनता। लेकिन यह नही सोचता कि न मालूम हम किसके भाग्य से सुखी हैं पर मालूम तो तब पडता है कि भाग्य ही क्या, भाग्यवान का साथ छूटने से ही जीवन की दशा क्या हो जाती है।

भाई हमारा भी यही हाल है। विशाल हवेली, लम्बा-चौडा व्यापार। चार-चार बेटे और उनकी बहुएँ सब-कुछ आनन्द ही आनन्द था। पर सबसे छोटा पुत्र व बहू बडे सीधे-सादे, पूरे घर की सार सभाल व सेवा करते लेकिन उनकी सबने उपेक्षा ही की और वह भी अति।

इससे दु खित होकर वे बिना बताये ही घर से निकल गये। वे क्या गये, हमारा भाग्य ही चला गया और आज हाट-हवेली सब कुछ छोडकर दर-दर की ठोकरे खाते हुए उनकी खोज करते-करते यहॉ आकर कुछ शाति का अनुभव कर रहे हैं। दु ख तो इसी बात का है कि इतने गॉवो मे खोज करते-करते हैरान हो गये। किसी ने बताया कि एक दम्पती इस रास्ते रत्नपुरी की ओर गये तो थे। बस, इसी विश्वास के साथ हम यहॉ पर आये और खोज की और कर रहे हैं कि हमारे भाग्य से वे हमको मिल जावे। यह कहते-कहते सबकी ऑखो से ऑंसू बरसने लग गये।

धन्ना ने सारी बात सुनकर कहा—आप ऑसू मत बहाइये। धैर्य धारण कीजिये। यह धरती ही ऐसी है कि यहॉं आने से दु खी से दु खी व्यक्ति भी सुख की प्राप्ति करता है। मैं भी अनाथ, लोगो की गायें चराकर जीवनयापन कर रहा था। सयोग से इस स्थान पर आया और सेठजी की छाया मिली और कुछ जीवन मे शाति का अनुभव हुआ। मुझे अतर विश्वास हो रहा है कि इस पवित्र भूमि मे इन पुण्यवान सेठजी की छत्र-छाया मे आपके भी सकट दूर होगे। इस प्रकार सात्वना देकर अपने कमरे मे चला गया। उसके बाद वे भी दिन-भर के थके हुए होने से अपने-अपने स्थान पर जाकर निद्राधीन हो गये। और

प्रात उठकर अपने दैनिक कार्य से निवृत्त होकर अपनी-अपनी ड्यूटी पर तैनात हो जाते। इसी क्रम मे ज्यो-ज्यो दिन निकल रहे थे त्यों-त्यो कार्य भी तीव्र गति से आगे बढ रहा था।

धन्ना उनके सुख दु ख की बात जो भी सुनता, सारी बात सेठ मोहनलाल (मोहिनी) को निवेदन कर देता जिसको सुनकर उसका मन भी द्रवित हो जाता। यह जानकर कि वास्तव मे हमारे आने के बाद पूर्ण रूप से दु खित बन गये अर्थात् हमारे साथ किये गए दुर्व्यवहार का इनको फल मिल गया है और उसके लिए इनके मन मे हार्दिक पश्चात्ताप भी है। यह जानकर मोहिनी कहती–धन्ना बिचारे बहुत दु खी हैं, इन्होने कभी कष्ट नहीं देखा है। इसलिये इनका ध्यान रखना और कभी-कभी इधर-उधर आते-जाते हाथो के इशारो से ही उनकी सार-सभाल ले लेती और मन मे यह सोचकर प्रसन्नता की अनुभूति करती कि चलो, एक बार सारा परिवार तो मिल गया। अब कमी रही है तो पतिदेव की ही, वह भी अवश्य पूरी होगी। ऐसा विश्वास मन मे रखकर शहर मे चली गई।

(27)

इधर वह गणेश उस दिन के तूफान मे दिशा

भ्रमित हो जाने से राह भटक गया और मोहिनी का साथ भी बिछुड गया। इसलिये उसको ढूढने हेतु जगल का कोना-कोना छान लिया पर पत्नी मोहिनी नही मिली। भूख, प्यास से एव जगली जानवरो के भय से उसका मन भय-भ्रान्त बन जाने से उसके वस्त्र भी झाड़ियो मे उलझ-उलझ कर चिथडे-चिथडे हो गये थे। उसको बार-बार मोहिनी की चिन्ता सताने लगी। पत्नी विरह के दु ख से व्यथित बना कभी-कभी तो वह पागलो की तरह रोने-चिल्लाने लग जाता। हाय मोहिनी ! तू मुझे छोडकर कहॉ चली गई। अब मैं तुझे कहाँ खोजू। कहॉ तेरा पता लगाऊँ ? इस प्रकार रोते-बिलखते कुछ माह बाद वह उसी रत्नपुरी मे पहुँच गया और उस नगरी की गली-गली मे घूम-घूम कर आवाज लगाता है। मोहिनी तू कहॉ है ? मुझे छोडकर तू कहॉ गुम हो गई ? तू जल्दी आ जा। तेरे बिना मेरा जीवन ही उजड़ गया है। अब मैं कैसे जीवन व्यतीत करू ?

गणेश की इस प्रकार की बातो को सुनकर कई लोग उसको सात्वना देते और कहते—लो भाई, पहले थोडा भोजन कर लो, फिर हम भी तुम्हारे साथ मिलकर खोजने की कोशिश करेंगे। तो कोई उसको पागल समझकर, चिढाते, गालिया देते। जिससे व्यथित होकर गणेश पॉच-दस दिन बाद वहॉ से रवाना होकर चलते-चलते उसी जगह

जगल मे पहुँच गया जहाँ नगर-निर्माण का कार्य चल रहा था। जिसको देखकर कुछ मजदूरो ने उसको शहर मे देखा था, वे चिल्ला उठे। अरे देखो, यह पागल बिचारा आ गया जिससे अन्य लोग भी उसको देखने लग गये। तब सेठ धनपत भी इधर-उधर घूमते-घूमते वहाँ पहुँच गये और ज्योही उनकी दृष्टि उस पर पडी और जोर से बोले—अरे यह तो गणेश है। फिर तो भाई-भाभिया सब आ गये। गणेश ने भी सबको पहचान लिया और जोर-जोर से रोने लगा। तब सब उसको लेकर अपने स्थान पर आये और पूर्ण स्नेह और प्यार से सहलाते हुए शान्त किया और सब उससे अपने अपराधो की क्षमायाचना करने लगे। और पूछने लगे, भैया क्या बात हो गई ? तुम अकेले कहाँ से आ रहे हो ? कहाँ गई हमारी बहूरानी मोहिनी ? यह सुनते ही तो गणेश और जोर-जोर से रोने लग गया। पिता धनपत ने उसे गले लगाया। कहा—बेटा ! क्या बात है ? जो बात हो बता दे। अब अपन सब मिल गये हैं। तब उसने अपनी बीती सारी बात बताई और कहा—तब से मैं उसको ढूढते गाँव-गाँव नगर-नगर मे भटके खा रहा हूँ। पर उसका कहीं अता पता नहीं लगा। यह तो ठीक हुआ कि आज आप सब मिल गये। तब सेठ धनपत बोला—बेटा, अब तू चिन्ता छोड दे और यहीं रहकर कुछ दिन आराम कर। जितने मे यहाँ का कार्य भी

निपट जायेगा। तब अपन सब मिलकर खोज करेगे। मेरा मन तो यही कहता है कि जैसे तुम्हारे जाने के बाद राजा के यहॉ से हुई चोरी का माल तुम्हारे भाइयो के खरीद लेने से पकड़ मे आ गये। जिस कारण से उन्होने कुपित होकर हमारी हवेली, दुकान सब सील करके हमको जैसे के तैसे नगरी से निकलने का आदेश दे दिया। उसके बाद हम सब भयकर कष्ट उठाते हुए भटकते-भटकते तुम्हारी खोज करते-करते यहॉ पर आये। तब से यहॉ पर भोजन और रहने को मकान, मजदूरी मिलने से कुछ शाति मिल रही थी। सिर्फ तुम दोनो की रात-दिन चिता सताती रहती थी। उसमे से आधी चिता तो दूर हुई आज तुम्हारे मिलने से। अब यहॉ पर वचनबद्ध होकर काम पर लगे तो हमारा कर्तव्य हो जाता है कि वह काम पूरा करके ही छोडे। नहीं तो उनके साथ धोखा होगा। यहॉ के सेठजी बहुत सज्जन हैं। उन्होने हमारी सारी दु खभरी बाते सुनते ही हमको यही अच्छी से अच्छी जगह पर काम पर लगा दिया। इसलिये अब यह कुछ ही दिनो मे काम पूरा होने वाला है। इसके बाद अपन सब मिलकर मोहिनी की खोज करेगे। मुझे तो यह भी पूरी आशा है कि इस पुण्यभूमि पर जैसे हमारा मिलन हुआ है वैसे ही बहू मोहिनी भी मिल सकती है। ऐसा परस्पर विश्वास देते हुए पुन कार्य मे जुट गये।

इधर धन्ना ने भी सारी बात जो सुनी वह सेठ मोहनलाल (मोहिनी) को बता दी। तब उन्होने सारी बात सुनकर अपनी खिडकी खोलकर देखा तो मन-मयूर नाच उठा, क्योकि वह तो पतिदेव गणेश ही थे। फिर भी उस बात को मन मे ही दबाकर बोला—देख धन्ना, यह सब भाग्य का चक्कर ही है। उसके पलटते ही सब-कुछ पलटने मे देर नही लगती। इसलिये तुम जाकर उनको मेरी तरफ से कह दो कि किसी प्रकार की चिन्ता मन से निकाल कर काम करते रहो। क्योकि अब थोडे ही दिन का काम है। फिर पूरा होते ही तो यहाँ नगर एव उसमे बने औषधालय, विद्यालय व पुस्तकालय आदि का उद्घाटन होगा। जिसमे बाहर के बडे-बडे राजा- महाराजा और जनता का आना होगा। उसमे आपकी बहू मोहिनी का भी आगमन हो सकता है। फिर भी यदि मिलन नहीं हुआ तो यह कार्य निवृत्त होने के बाद उन राजा-महाराजाओ के सहयोग से मैं स्वय उनकी खोज कराऊँगा। इसलिये फिलहाल यहाँ सहज सबका मिलन हो गया है, तो अब बिखरने का नाम न ले। और जो उनके सबसे छोटे पुत्र आए हैं, उनको सबकी मजदूरी चुकाने के काम पर लगा देते हैं। ताकि वे खजाने से पैसा लेकर मजदूरी चुका कर सारा हिसाब रखे। और खास तौर पर तुझे उनकी सेवा मे ही साथ-साथ रहना है ताकि उनकी हर आवश्यकता

की पूर्ति का ध्यान रखना है। साथ ही तेरे पास वाले कमरे मे ही उनके सोने-बैठने की व्यवस्था कर देना।

धन्ना ने सेठ मोहनलालजी की सारी बात सुनी और उसी के अनुसार सेठ धनपत और उनके पुत्रो को बता दी। जिसको सुनकर सब प्रसन्न हो उठे। सेठजी व धन्ना के प्रति आभार व्यक्त करने लगे। तब धन्ना ने गणेश को अपने साथ लिया और अपने पास वाले कमरे मे सारी व्यवस्था कर दी। सारा कार्य बडी तेजी से चल रहा था। कोट के अन्दर का कार्य पूरी तरह से सम्पन्न हो गया। सड़के, चौराहे आदि के निर्माण का भी कार्य अति आवश्यक था, वह भी पूर्णता की ओर था। चारों दरवाजों के आस-पास बसने वाले श्रेष्ठीवर्यो की हवेलियों और दुकानो के निर्माण का कार्य भी सम्पन्नता की ओर था। रगाई-पोताई आदि का कार्य भी पूरे जोरो से चल रहा था। क्योकि नगर व उसमे निर्मित परमार्थ सस्थानो का उद्घाटन बैशाख शुक्ला तृतीया का निश्चित होकर रत्नपुरी के महिपाल नरेश के कर-कमलो द्वारा होने की घोषणा व उसके आमत्रण पत्र जगह-जगह भिजवा दिये गये थे। ज्यों-ज्यो दिन नजदीक आने लगे त्यो-त्यो कार्य भी बड़े उत्साह के साथ तीव्र गति से चलकर समाप्ति की स्टेज पर पहुँच गया।

सेठ मोहनलाल की हवेली विशेष रूप से सजाई

गई और सब प्रतिष्ठानो पर श्रेष्ठी धनपत व सेठानी लक्ष्मी के नाम से जैसे श्री धनलक्ष्मी औषधालय, विद्यालय आदि और चारो मुख्य द्वारो पर धनलक्ष्मी नगर, चारो ओर जगह-जगह पर बगीचो आदि पर भी यही नाम लिखवा दिये। साथ ही चारो द्वार व मुख्य द्वार चौराहो व उन सस्थानो पर सेठ-सेठानी के चित्र निर्मित कराके उनको सुन्दर वस्त्रो से आच्छादित करा दिया।

(28)

आज अक्षय तृतीया का दिवस था। आगन्तुको एव महाराजा रत्नपुरी नरेश एव उनके साथ आने वाले राजकीय अधिकारियो के लिये विशेष पाडाल सजाकर बैठने की व्यवस्था की गई। फिर श्रेष्ठीवर्य एव उस नगर मे आकर बसने वाले सेठ-सेठानियो एव व्यापारियो के बैठने की व्यवस्था की गई थी। उसके बाद अपने परिवार वालो के बैठने की व्यवस्था के साथ ही नगर निर्माण मे सहयोगी मजदूर, कर्मचारी वर्ग के बैठने की व्यवस्था कर दी गई। रत्नपुरी नरेश महिपाल के साथ राजप्रमुख व श्रेष्ठिवर्यों को भी आमन्त्रित स्वय ने जाकर कर दिया था जिससे उनके आगमन की भी तैयारी हो रही थी। यथासमय महाराजा महिपाल नरेश का आगमन हुआ और उनके कर-कमलो द्वारा चारो मुख्य द्वारो पर लगे शिलापट्ट, जिप

पर लिखा था धनलक्ष्मी नगर, का अनावरण हुआ, फिर उन पर बने चित्रो का।

ज्योही उन पर धन्ना की, वहाँ काम करने वाले मजदूरो की व चारो पुत्रों के साथ तीनो बहुओ की दृष्टि पडी तो वे ऑखे फाड-फाड कर देखने लगे और आश्चर्य करने लगे कि ये चित्र हो हमारे सास-श्वसुर के अर्थात् माता-पिता के हैं। क्या बात है ? यह कौन मोहनलाल सेठ है। सब जाकर सेठ धनपत व सेठानी लक्ष्मी को भी ले के आये और रत्नपुरी नरेश के सामने उनको खडे करके कहने लगे–राजन् ये हमारे माता-पिता और अभी आपने जिन चित्रो का व नामपट्ट का अनावरण किया जो सब इनसे मिलते-जुलते हैं क्योकि इनका नाम ही सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी है। अब आप ही निर्णय करिये कि इसके पीछे क्या रहस्य है ? साथ ही हमारे मन मे यह सशय भी पुष्ट होता जा रहा है कि हमारा यह पुत्र गणेश, इसकी पत्नी मोहिनी हमारे बिना पूछे घर से निकल गये थे, उनकी खोज करते-करते आज साल-भर हो गया है। हम भटकते-भटकते यहाँ पहुँचे और मजदूरी करते हुए यही सोच रहे थे कि कहीं हमारे पुत्रवधू का पता लग जाए। और सहज गणेश तो हमको कुछ दिन पहले ही मिला था पर पुत्रवधू का तो अभी तक कुछ पता ही नहीं चला है। इससे लगता है कि इस सेठ ने ही उसको छिपा

रखा है। इसलिये आप हमारे सशय का निवारण कीजिये।

इस बात को सुनते ही रत्नपुरी नरेश महिपाल ने गौर से देखा तो चित्र व नाम तो बिल्कुल इनके ही मिलते हैं। परन्तु इनकी पुत्रवधू का कैसे पता लगाये। इस उधेड़बुन मे नरेश मोहनलाल सेठ की ओर मुडकर जानने की तैयारी करने लगे। लेकिन देखते क्या हैं, वह तो वहाँ से नदारद। इतने मे तो वही मोहिनी अपने पुरुष वेष का परित्याग कर जो वेश घर मे धारण करती थी, उसी को पहनकर वहाँ पहुँच गई और अपने सास-श्वसुर, जेठ-जेठानियो को नमस्कार करके फिर रत्नपुरी नरेश महिपाल के चरणो मे झुककर स्वागत करते हुए कहने लगी–पधारिये, आपका स्वागत है। इस मधुर ध्वनि से स्वागत करके कोट के भीतर ले जाकर यथास्थान बैठने का आग्रह किया। साथ ही अपने सास-श्वसुर, जेठ-जेठानियो एव बाल-बच्चो को धन्ना के साथ अन्दर महल मे भेजा जहाँ उनके योग्य वस्त्र, जेवर सब पडे थे और जल्दी इनको ये वस्त्र बदला कर इस सभा मे लेकर आओ।

स्वय रत्नपुरी नरेश महिपाल, राज्य-कर्मचारी आदि सभी आगन्तुक आँखे फाड-फाड कर देख रहे थे कि यह सारा क्या रहस्यमय नजारा है। इतने मे तो धन्ना स्वय उन सबको उनके योग्य वस्त्र बदलाकर पुन सबको

मडप मे लाया और मोहिनी के सकेतानुसर उनके लिए नियत स्थान पर बिठा दिया। फिर स्वय मोहिनी ने अपने सकल्प से लगाकर घर का त्याग, ऑधी-तूफान मे पतिदेव का बिछुडना, डाकुओ का सामना करना, यहॉ तक पहुॅचना, तेले का तप, महामत्र का स्मरण, धन्ना का सहयोग, मयूर टोकरी और पखा व कचुकी, उसके बदले प्राप्त रत्न, रत्नपुरी नरेश महिपाल ने नगर निर्माण हेतु स्वीकृति और पारिवारिक सदस्यो का पुन मिलन आदि सारी घटित घटना का ऐसा चित्रण किया कि सुनकर सब के साथ रत्नपुरी नरेश महिपाल भी आश्चर्य करने लगे और बोल उठे कि स्वाभिमानी व्यक्ति हर जगह अपने पुरुषार्थ से सफल बन जाता है। यह एक नारी ने सत्य करके दिखला दिया है।

जिसने भी सुना, सबमे स्वाभिमान जाग्रत हुए बिना नहीं रहा। सभी लोग इसी बात की चर्चा करते हुए अपने-अपने स्थान को पुन लौट गये। नया नगर, उसमे उपलब्ध सारी व्यवस्था देख-देख कर सबके मन मे यह विचार बन गया कि अब तो इस नगर मे आकर बसना हर दृष्टि से हितकर है। स्वय रत्नपुरी नरेश महिपाल भी आश्चर्य प्रकट करते हुए बडे गौरव के साथ बोले कि इस नारी ने अपने स्वाभिमान को रखते हुए जो कहा, वह कितने कष्ट सहने पर भी करके दिखाया। हम सबके

लिये अनुकरणीय आदर्श है। मैं इस बहिन का सम्मान करते हुए अपनी धर्मबहन बनाता हूॅ और चाहता हूॅ कि मेरे हाथ मे राखी बाध कर मुझे अपने भाई के रूप मे स्वीकार करे। इतने मे तो सारा सभामडप हर्ष-हर्ष की ध्वनि से गूज उठा और मोहिनी ने भी अपने पतिदेव के साथ रत्नपुरी नरेश महिपाल के भाल पर कुकुम का तिलक करके राखी बाध कर चरणो मे नमस्कार किया। उसी समय रत्नपुरी नरेश ने अपने गले का एक हार बहिन मोहिनी को, दूसरा बहनोई गणेश को पहना कर अपने महल मे उनके सब पारिवारिक सदस्यो को पधारने का आमत्रण दिया और फिर बड़े हर्ष की अनुभूति के साथ सबको सकेत किया कि यह नगर भी रत्नपुरी का ही एक हिस्सा है। यहॉ निवास करने वालो के लिये और व्यापार आदि सभी कार्यों के लिए राज्य की तरफ से सारी व्यवस्था मुहैया कराई जायेगी। जो यहॉ बसना चाहे वे बडे हर्ष के साथ यहॉ आकर बस सकते हैं।

रत्नपुरी नरेश के इस आदेश से सब मे हर्ष की लहर व्याप्त हो गई। सबने उसी समय अपने-अपने निवास व प्रतिष्ठान हेतु जगह आवटित करा कर कार्य भी प्रारम्भ कर दिया। जिससे थोड़े ही समय मे "धनलक्ष्मी नगर" की यश-कीर्ति चहुँ दिश फैलने से चारो तरफ के बडे-बड़े व्यापारी वहॉ आकर बसने लग गये।

(29)

रत्नपुरी नरेश महिपाल ने अपने राजमहल मे जाकर दूसरे दिन ही राजसेवको के साथ रथ भेजकर पूरे परिवार को लाने के लिए भेज दिया। जिससे पहले तो एक बार सब सकुचित हुए, पर उनके अति आग्रह से सब रथो मे बैठकर राजभवन पहुँचे। स्वय रत्नपुरी नरेश महिपाल व उनकी महारानियो ने अपनी सगी बहन व ननद के समान ही सत्कार-सम्मान देकर उसके स्वाभिमान की भूरि-भूरि प्रशसा की। साथ ही धन्ना को देखकर तो महारानीजी एकदम आश्चर्य के साथ बोल पडी–अरे ! तू तो वही है जिसने देवी प्रदत्त मयुर टोकरी, पखा और कचुकी लाकर दी, फिर तो आया ही नही। कहॉ है वह तुम्हारी देवी। तब धन्ना बोला–महारानीजी, यही वह देवी है। और इनकी ही वे कलाकृतियॉ है और अब वही आपकी प्यारी ननद बन गई है। तब तो रानीजी ने सारी कलाकृतियॉ लाकर राजा महिपाल को बतलाई। जिनको देखकर वे भी आश्चर्यचकित हुए बिना नहीं रहे।

सबको पूरे सम्मान के साथ भोजन कराया और सारा परिचय पूछा। तब मालूम पडा कि कचनपुर नरेश ने थोडे-से अपराध के दडस्वरूप सारी हवेली और दुकान जब्त करके वहॉ से निकाल दिया। तब रत्नपुरी नरेश ने

वहॉ भी समाचार दिलाये, जिनको पाकर कचनपुर नरेश ने क्षमायाचना की और पुन वहॉ से आकर बसने का आग्रह किया। तब तीनो भाई और भाभियो को वहॉ भेज दिया।

इधर मोहिनी और उसके पति गणेश एव सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी को पूरे राज-सम्मान के साथ विदाई दी। तब वे सब धनलक्ष्मी नगर मे अपने नये बने महल मे निवास करने लगे। रत्नपुरी नरेश ने वह धनलक्ष्मी नगर एव उसके आस-पास के दौ सो गॉव की जागीरी बहिन के रक्षाबधन के उपलक्ष मे प्रदान की और उप-राज्य के रूप मे घोषणा करके गणेश का राजतिलक करके उनके हाथ मे ही सारी व्यवस्था सौंप दी। अब वे एक राजा-रानी के रूप मे जीवनयापन करने लगे। अब तो धन्ना का भी गौरव बढ गया व सेठ-सेठानी की सेवा के साथ सारी अतरग व्यवस्था सभालने लगा। अब महारानी मोहिनीदेवी ने एक योग्य सुशील कन्या के साथ धन्ना की शादी कराके उसको एक स्वतत्र हवेली आवास-निवास के लिए दे दी जहॉ सुखपूर्वक अपना जीवन निर्वाह करने लगा।

कालान्तर मे मोहिनी के भी क्रमश तीन पुत्र हुए जिनके नाम आदित्य, समरादित्य ओर समरजीत रखे। वे भी युवा हो गये। रत्नपुरी नरेश महिपाल ने भी अपने सगे

भानजो की तरह उनको प्रेम-स्नेह दिया और सर्वकलाओ मे निपुण बनाया। जिसके फलस्वरूप तीनो ने स्वय के पुरुषार्थ के बल पर तीन नये राज्यो की स्थापना की और यौवन वय मे बड़े-बडे राजाओ की राजकुमारियो के साथ विवाह सम्पन्न हुए। सबके पुत्र पुत्रियो से भरा-पूरा परिवार हो गया। सेठ धनपत और सेठानी लक्ष्मी ने भी अपना अतिम समय निकट जान कर सथारा ग्रहण करके पडितमरण को वरण कर लिया।

गणेश नरपति एव महारानी मोहिनी एक दिन महल के झरोखे मे बैठे-बैठे परस्पर मनोविनोद कर रहे थे। बात-ही-बात मे बीते दिनो की स्मृति चलचित्र की तरह उभरने लगी। उस पर चिन्तन करते हुए विचार करने लगे कि अहा ! वाह रे कर्मचन्द तू भी व्यक्ति को अपने प्रभाव से राजा से रक बनाने मे देरी नहीं करता और पुन उसी रक को राजा बनाने मे भी पीछे नहीं रहता। तेरी माया बडी विचित्र है। कभी तो तू व्यक्ति को भूखे ही सोने के लिए विवश कर देता है तो कभी उसी को तू छप्पन भोग कराकर खुश कर देता है। कभी तो व्यक्ति को ऊँचे महलो मे रत्नजड़ित सिहासन पर बिठा देता है तो कभी उसको फटे हाल रहने पर विवश कर देता है। यह है तेरी शक्ति। वास्तव मे तेरी शक्ति के सामने कोई टिक नहीं सकता।

ऐसा चिन्तन करते हुए पुन विचार-धारा ने पलटा खाया और एक जटिल प्रश्न ने आकर भारी समस्या पैदा कर दी। वह प्रश्न था कि आत्मा और कर्म दोनो मे शक्तिशाली कौन है ? इस समस्या को सुलझाने मे गणेश व मोहिनी दोनो ने अपने उपयोग रूपी समुद्र मे गहरी डुबकियॉ भी लगाई लेकिन कोई भी समाधान नहीं निकला।

(30)

इतने में द्वारपाल ने आकर निवेदन किया–राजन् आज हमारे महान् पुण्योदय से महान् तपस्वी विशिष्ट ज्ञानी धर्मघोष सूरसेन अपने विशाल शिष्य परिवार सहित पधारे हैं और नगरी के बाहर धनलक्ष्मी उद्यान मे विराजमान हैं। यह सुनते ही दोनो के हर्ष का ठिकाना नहीं रहा।

बडे उत्साह-उमग के साथ रथ मे बैठकर अपने महल से रवाना होकर धनलक्ष्मी उद्यान मे पहुँचे और पॉचों अभिगमो को साधते हुए आचार्य धर्मघोष की उपासना में बैठे और आराधना के बाद अपने मन मे उठने वाले प्रश्न के समाधान हेतु अर्ज करने लगे। भते ! कर्म और आत्मा में शक्तिशाली कौन है ?

तब आचार्य धर्म घोष फरमाने लगे–राजन् यह ससार जीव और अजीव–इन दो तत्त्वो के सम्बन्ध का ही

परिणाम है जिसमे चैतन्य की शक्ति सर्वोपरि है। जिसमे अनन्त ज्ञान, अनत दर्शन, अनत सुख विद्यमान हैं। लेकिन कर्म अजीव तत्त्व की एक वर्गणा है जो काजल से भी ज्यादा सूक्ष्म है। और सारे लोक मे ठूस-ठूस कर भरी हुई है। यहाँ तक कि आत्मा (चेतन) जिस भी शरीर मे निवास करती है, उसके भीतर भी। लेकिन अपने जड स्वभाव के कारण चैतन्य पर स्वय अपना कोई प्रभाव नहीं डाल सकती। जैसे बोतल मे पडी शराब, डिब्बे मे पडी मिर्च, शक्कर, गुड आदि।

ये वस्तुए वे जीव के ग्रहण करने पर ही अपना प्रभाव दिखाते हैं। वैसे ही कर्म भी जीव के उपयोग लक्षण के स्वभावानुसार सचरित होते हैं। तब उनमे एक्सरे मशीन से भी हजार गुणा अधिक कम्पन होता है जिससे जैसे काजल की डिब्बी मे एक बारीक धागे के कम्पन से काजल चिपककर उस धागे के मूल स्वरूप को काला बना देता है वैसे ही यह कर्म रज जो उससे भी अधिक सूक्ष्म है, वे मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और योग रूप शुभाशुभ अध्यवसाय के आधार से आत्मा के साथ चिपक जाते हैं। फिर अबाधाकाल के पूर्ण होते ही उदय मे आते हैं तब वे अपनी शक्ति दिखाते हैं। कभी शुभ रूप मे, कभी अशुभ रूप मे। जब शुभ रूप मे उदय मे आते हैं तब एक

रक को राजा बनते देरी नहीं लगती और अशुभ रूप मे उदय मे आते हैं तो रक बनने मे भी देरी नहीं लगती। लेकिन जीव जब मिथ्यात्वोदय से ग्रसित रहता है तब उस सुख-दु ख को पर निमित्त मानते हुए राग-द्वेष की परिणति से ग्रसित होकर नये कर्म का बन्धन कर लेता है। लेकिन जब उसके अन्त मन मे सम्यक्त्व की ज्योति प्रकट हो जाती है तब उसे यह ज्ञान होता है कि इस कर्मबधन का कर्ता मैं ही हूँ और इससे बचने व तोड़ने का सामर्थ्य भी मेरे ही अन्दर है। यदि मैं अभिनव कर्मबधन से बचता हुआ पूर्वबधित कर्मों को तोड डालू तो मैं भी अरिहत बनकर सिद्धावस्था को प्राप्त करके अजर-अमर बन सकता हूँ।

और उसे प्राप्त करने का श्रेष्ठतम साधन यह मनुष्य जीवन ही है। तो फिर मैं इसको सत्ता, सम्पत्ति व इन्द्रियो जनित भोग-वासना की भट्टी मे झोक कर क्यू बर्बाद करू। क्यो नही मैं इससे सयम का आराधन करके उस दशा की प्राप्ति मे इस मनुष्य जीवन का सदुपयोग कर लू। यह चिन्तन दृढ होते ही आत्मा सयम मार्ग पर अपना चरण बढाकर उत्तरोत्तर गुणस्थानारोहण करती हुई अरिहन्त दशा को प्राप्त करके सर्वकर्म का क्षय करके सिद्धावस्था का वरण कर लेती है। अर्थात् सिद्ध-बुद्ध-मुक्त

बन जाती है। तो राजन् यह है—आत्मा और कर्म की शक्ति की महिमा।

नरपति गणेश और महारानी मोहिनी भी आचार्य धर्म घोष के इस मर्मभरे रहस्य को श्रवण करके गहन चितन करके ससार से विरक्त बनकर उन महापुरुषो के चरणो मे ही सयम मे अनुरक्त बनकर परित्तससारी बने। अर्थात् अपनी आत्मा का मार्ग प्रशस्त किया।



महालाभ

महालाभ हो = महानिर्जरा महापर्यवसान हो, ऐसे काम क्या हैं ?

1 ज्ञान की अपेक्षा

1 एक भी जिन वचन सुने तो महालाभ हो,
2 एक भी गाथा पद कंठस्थ करें,
3 एक भी पद दुहरावे,
4 सुनी हुई धर्मकथा दूसरों को सुनावे,
5 धर्म कथा सुननेवालों को प्रभावना दे,
6 एक बार भी उत्तम स्वप्न देखें,
7 एक बार भी जातिस्मरण ज्ञान हो।

2 दर्शन की अपेक्षा

1 एक बार भी संत दर्शन करें,
2 एक बार भी साधु को वंदन करें,
3 एक बार भी श्रावक को जय जिनेन्द्र कहे,
4 एक बार भी नवकार मंत्र गिने,
5 एक भी माला फेरे,
6 एक बार भी अर्हत आदि का गुणगान करे,
7 एक भी स्वधर्मी की वैयावच्च करें,
8 एक बार भी संतों को अपने घर उतारे धर्मस्थान दे।

3 चारित्र की अपेक्षा

1 बारह व्रतों में से एक भी व्रत लें,
2 एक भी सामायिक करें,
3 एक बार भी संवर करें,
4 एक बार भी 14 नियम धारे,
5 एक बार भी सुपात्र दान दें,
6 एक रात्रि भी शील पाले,
7 एक जीव को भी अभयदान दें,
8 एक भी व्यसन छोड़ें।

4 तप की अपेक्षा

1 एक भी रात्रि भोजन छोड़े,
2 एक भी नवकारसी करें,
3 एक बार भी बिआसना करें,
4 1 घण्टा भी चौविहार करें,
5 एक बार भी थाली धोकर पीवे,
6 एक बार भी सचित्त आहार का त्याग करें,
7 रात्रि को सागारी संथारा करें,
8 एक बार भी प्रतिक्रमण करें,
9 एक बार भी कायोत्सर्ग करें।

5 भावना की अपेक्षा

1 अनित्यादि 12 भावना भावे,
2 मैत्री आदि 4 भावना भावे,
3 संवेग वैराग्य के भाव रखें,
4 तीन मनोरथ का चिन्तन करें
5 स्वधर्मी संघ में मध्यस्थ रहे,
6 स्व संतति दीक्षा ले ऐसा भाव रखे,
7 भवोभव जैन धर्म मिले ऐसी भावना करें,
8 भविष्य के लिए पच्चक्खाण संग्रह करें।